Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

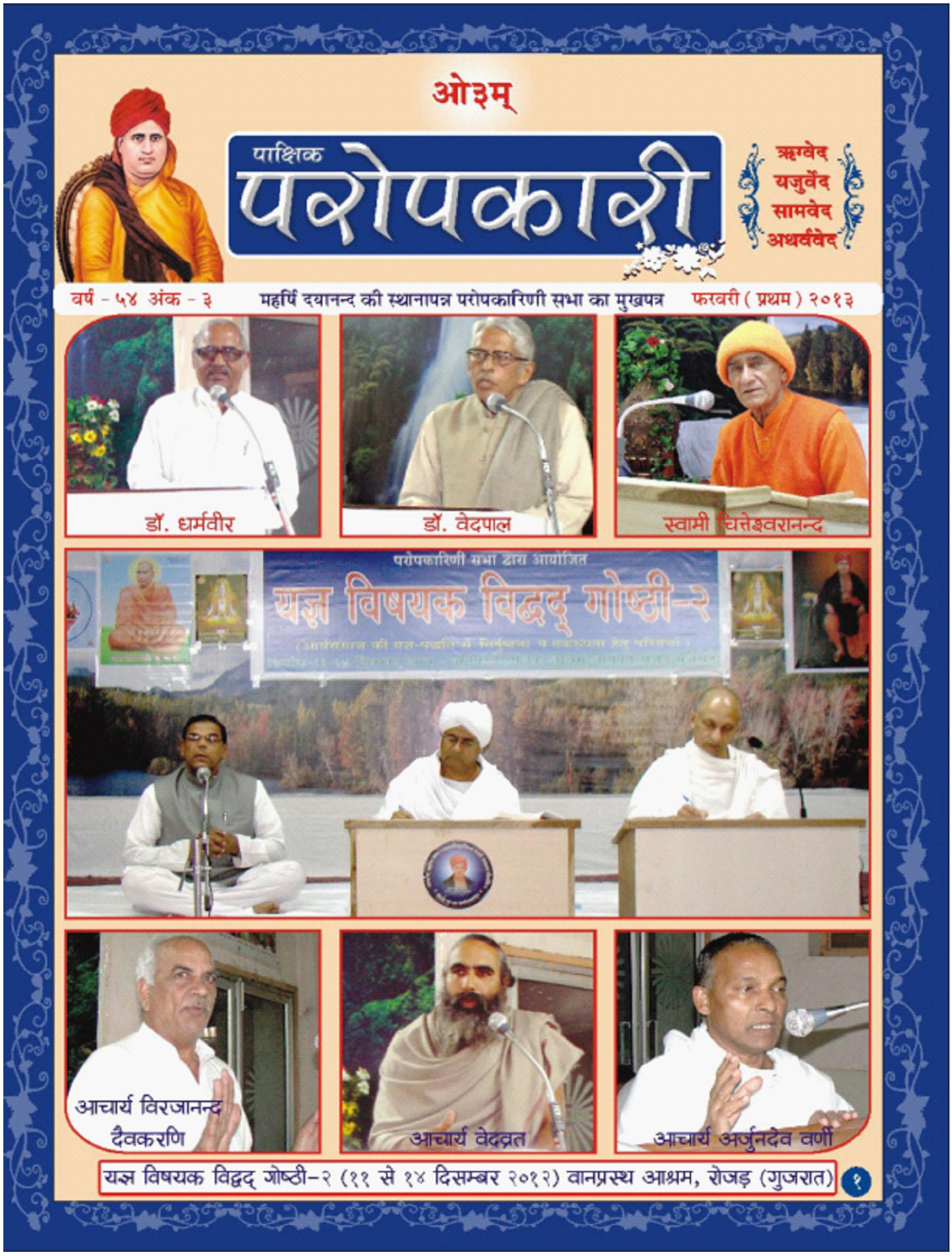

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५३ **अंक** : ०३
दयानन्दाब्द: १८८
विक्रम संवत्: माघ कृष्ण, २०६९
कलि संवत्: ५११३
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११३

सभा प्रधान-गजानन्द आर्य
अवै. सम्पादक-प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी प्रथम २०१३

अनुक्रम

१. स्वामी विवेकानन्द और उनका.....	सम्पादकीय	०४
२. तृष्णा	रामगोपाल गर्ग	०७
३. जिज्ञासा-समाधान-४१	सत्यजित्	०८
४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	१२
५. महर्षि दयानन्द सरस्वती.....	रामकुमार गोयल	१६
६. मृत्यु के बाद क्या?	महेन्द्र आर्य	२४
७. भ्रमोच्छेदन	धर्मवीर	२८
८. चतुर्वेदविद्: आमने-सामने-३८	सत्यजित्	३२
९. पाठकों की प्रतिक्रिया		३५
१०. पाठकों के विचार		३६
११. संस्था समाचार	ब्र. प्रभाकर	३७
१२. आर्यजगत् के समाचार		३९

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सम्पादकीय-

स्वामी विवेकानन्द और उनका हिन्दुत्व

संन्यासी के नाम पर आकर्षक व्यक्तित्व, सुन्दर शरीर के साथ फक्कड़पन लिए किसी का चित्र सामने उभरता है, तो उस चित्र को स्वामी विवेकानन्द कहते हैं। जनसामान्य किसी संन्यासी की चर्चा करते हैं, तो उनके मुख से अनायास ही स्वामी जी का नाम जबान पर आ जाता है। १२ जनवरी को स्वामी विवेकानन्द का जन्मदिन था। यह उनके जन्म का एक सौ पचासवां वर्ष था। सभी समाचार पत्रों ने स्वामी विवेकानन्द को स्मरण करते हुए उनके जीवन पर प्रकाश डालने वाली सामग्री प्रकाशित की। एक समाचार पत्र में स्वामी विवेकानन्द के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए उनकी वेदान्त चर्चा के साथ उनके बिरयानी पकाने के कौशल का भी उल्लेख करते हुए लिखा था ''उत्तरी केलिफोर्निया के रसोईघर में श्रोफ यानि रसोइया विवेकानन्द। अद्‌भुत दृश्य होता था। बिरयानी पकाते-पकाते स्वामी दर्शन पर बात करते रहते थे। गीता के अट्ठारहवें अध्याय से उद्‌धरण देते रहते थे। विवेकानन्द के लिए वेद उपनिषद् का प्रचार-प्रसार मानव-कल्याण की बातें और व्यञ्जन की रेसिपी में कोई फर्क नहीं था''। -दैनिक भास्कर, अजमेर।

स्वामी विवेकानन्द न केवल स्वयं मांसाहारी थे अपितु वे मांसाहार के समर्थक भी थे। उनके साहित्य में जो प्रसंग आते हैं, उन पर दृष्टि डालना उचित होगा। उनके विचारों में जो परस्पर विरोध हैं, उनके चलते उनकी मान्यता स्थिर करना भी कठिन होगा। स्वामी जी वेदान्त की चर्चा करते हुए लिखते हैं-''वेदान्त इस बात को नहीं मानता कि पशुगण मनुष्यों से पृथक् हैं और ईश्वर ने उन्हें हमारे भोज्य रूप में बनाया है।'' -व्यावहारिक जीवन में वेदान्त (पृष्ठ-११)। इसी बात की पुष्टि में अपने मांसाहार को अपनी दुर्बलता बताते हुए इसी पुस्तक में कहते हैं-''मैं स्वयं शाकाहारी नहीं हूं, किन्तु मैं शाकाहार को आदर्श मानता हूं। जब मैं मांस खाता हूँ तब जानता हूं कि यह ठीक नहीं है। आदर्श यही है कि मांस न खाया जाए, किसी भी प्राणी का अनिष्ट न किया जाए, क्योंकि पशु भी हमारे भाई हैं।'' (पृ.१२)। अन्यत्र लिखा है- ''मांस का परित्याग करना चाहिए। यह तो स्वभावत: अपवित्र वस्तु है, अत: इसका त्याग करना उचित है। दूसरे का प्राण लेकर हमें मांस की प्राप्ति होती है। हम तो क्षण मात्र के लिए स्वाद-सुख पाते हैं, पर दूसरे जीवधारी को सदा के लिए अपने प्राणों से हाथ धोना पडता है। (प्रेम योग-पृ.४)।

जहां स्वामी विवेकानन्द मांसाहार को स्वयं एक स्थान पर अनुचित मानते हैं, तो दूसरी ओर मांसाहार की घोर वकालत करते दिखाई देते हैं-**शिष्य**-मछली तथा मांस खाना क्या उचित तथा आवश्यक है? **स्वामी जी**-खूब खाओ भाई। इससे जो पाप होगा, वह मेरा। तुम अपने देश के लोगों की ओर एक बार ध्यान से देखो तो मुंह पर मलिनता की छाया, कलेजे में न साहस, न उल्लास, पेट बड़ा, हाथ-पैरों में शक्ति नहीं, डरपोक और कायर। **शिष्य**-मछली और मांस खाने से यदि उपकार ही होता है, तो बौद्ध तथा वैष्णव-धर्म में अहिंसा को 'परमोधर्म:' क्यों कहा गया है? **स्वामी जी**-बौद्ध तथा वैष्णव-धर्म अलग नहीं हैं। बौद्ध-धर्म के उच्छेद के समय हिन्दू-धर्म ने उनके कुछ नियमों को अपना लिया था। यही इस समय भारत में वैष्णव-धर्म के नाम से विख्यात है। 'अहिंसा परमोधर्म:' बौद्ध-धर्म का एक बहुत अच्छा सिद्धान्त है, परन्तु अधिकारी का विचार न करके जबरदस्ती राज-शक्ति के बल पर उस मत को सर्वसाधारण पर लादकर बौद्ध-धर्म ने इस देश का सर्वनाश किया है। परिणाम यही हुआ कि लोग चींटियों को चीनी देते हैं, पर धन के लिए भाई का सर्वनाश कर डालते हैं। इस प्रकार अनेक 'बक: परम-धार्मिक:' के अनुसार जीवन व्यतीत करते देखे जाते हैं। दूसरी ओर देख! वैदिक तथा मनु के धर्म में मछली और मांस खाने का विधान है और साथ ही अहिंसा की बात भी। अधिकारी भेद से हिंसा-अहिंसा धर्मों का पालन करने की व्यवस्था है। श्रुति ने कहा है-मा हिंस्यात् सर्वभूतानि। मनु ने भी कहा है 'निवृत्तिस्तु महाफला।'

इसी प्रकार शिष्य द्वारा मांस-भक्षण को व्यभिचार से भी बुरा बताये जाने पर स्वामी जी उत्तर देते हैं-यह (पाप का भाव) कहां से आया, यह जानने से तुम्हें क्या लाभ? परन्तु यह मत तुम्हारे समाज तथा देश में प्रविष्ट होकर जो सर्वनाश कर रहा है, यह तो देख रहा है न? देखो न, तुम्हारे पूर्व-बंग के लोग बहुत मछली और मांस खाते हैं, कछुआ खाते हैं, इसलिए पश्चिम-बंग लोगों की तुलना में अधिक स्वस्थ हैं। पूर्व-बंग में तो धनवानों ने भी अभी तक रात को पूड़ी और रोटी खाना नहीं सीखा। इसीलिये तो वे इस ओर के लोगों की तरह अम्लरोग के शिकार नहीं बने। सुना है पूर्व बंग के देहातों में लोग अम्ल-रोग जानते ही नहीं। **शिष्य**-जी हां हमारे देश में अम्ल-रोग नाम का कोई रोग नहीं। इस देश में आकर इस रोग का नाम सुना। देश में हम दोनों समय मछली-भात खाते

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

हैं। **स्वामी जी**–खूब खाया कर। घास–पात खाकर पेट–रोगी लोगों के दल से देश भर गया है...। **शिष्य**–परन्तु महाराज! मांस–मछली से तो रजोगुण की वृद्धि होती है? **स्वामी जी**–मैं यही तो चाहता हूँ.....अब देश के लोगों को मछली–मांस खिलाकर उद्यमशील बना डालना होगा, जगाना होगा, कार्य–तत्पर बनाना होगा, नहीं तो धीरे–धीरे देश के सभी लोग जड़ बन जायेंगे, पेड़–पत्थर की तरह जड़ बन जायेंगे। इसीलिए कह रहा था कि मछली और मांस खूब खाना।

स्वामी विवेकानन्द के इन उद्धरणों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि उनके अधर्म में हिंसा की गणना नहीं है। वे योग, वेदान्त, ईश्वर की चर्चा करने में प्राणी मात्र को भाई कहते हैं, परन्तु भोजन में वास्तविक अद्वैत बन जाते हैं। खाने वाला भी ब्रह्म है, खाया जाने वाला भी ब्रह्म है, ब्रह्म ने ब्रह्म को खाया तो क्या अनुचित किया? क्या इस आदर्श को हमारे हिन्दुत्ववादी अपना आदर्श बनाना चाहेंगे? हिन्दू धर्म की बहुत स्थूल सीमा है, हिन्दू मांस–मछली खाते हुए भी गो–मांस खाने को पाप और अधर्म मानता है। पर स्वामी विवेकानन्द के लिए इसमें कोई वैचारिक संकट नहीं। उनका हिन्दुत्व इतना कमजोर नहीं, जो गो–मांस के टुकड़े से खण्डित हो जाता हो, स्वामी जी कहते हैं–''क्या ईश्वर तुम्हारे जैसा मूर्ख है, क्या वह इतना नाजुक है कि मांस के टुकड़े से उसकी दया रूपी नदी का प्रवाह रुक जायेगा? यदि वह सचमुच ऐसा है तो उसका मूल्य एक पाई के बराबर भी नहीं।'' (५८५)। जब स्वामी विवेकानन्द विदेश में थे और कुछ कट्टर रूढ़िवादी लोगों ने स्वामी जी पर **गोमांस खाने का आरोप** लगाया, तो स्वामी जी ने इसका जो उत्तर दिया, वह उस विषय में उनके जीवन–चरित्र में इस प्रकार लिखा मिलता है–जब कुछ रूढ़िवादी कट्टर हिन्दुओं ने स्वामी विवेकानन्द पर गोमांस खाने का आरोप लगाया, तो उन्होंने उत्तर दिया कि यदि भारत के लोग चाहते हैं कि मैं हिन्दू भोजन का कठोरता से पालन करूं, तो उनसे कह दो कि एक रसोइया भेज दें और उसके वेतन का भी प्रबन्ध कर दें.....रुढ़िवादी ब्राह्मण मांसाहार से घृणा करते हैं, किन्तु मैं साहस के साथ कहता हूं कि वैदिक–काल में ब्राह्मण गोमांस खाया करते थे। (बायोग्राफी–पृ.९६ व १२९)

इस परिस्थिति में हिन्दू–धर्म की रक्षा करने वालों को सोचना होगा कि यदि स्वामी विवेकानन्द हिन्दुत्व के आदर्श हैं तो हिन्दू–धर्म और **ईसाई व इस्लाम** में क्या अन्तर है? स्वामी जी के विचारों में **इस्लाम** क्या है? वे कहते हैं–''इस्लाम मुसलमानों को इजाजत देता है कि वे इस्लाम को न मानने वालों को मार डालें। कुरान में स्पष्ट लिखा है कि काफिरों को मार डालो यदि वे मुसलमान बनने से इन्कार करें। उन्हें अवश्य जला डालना चाहिए या मौत के घाट उतार देना चाहिए'' (विवे.भाग–२, पृ. २६५)। एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा है–मुसलमान, कसाईयों की तरह लोगों की गर्दन काटते हुए भारत में आये और मारधाड़ करते हुए देश पर अधिकार कर बैठे। (भाग ७, २७९–८०)। आगे लिखा है–इस्लाम में भाईचारे की भावना अपने धर्मावलम्बियों तक सीमित है। (भाग २, ३७१)। इस धारणा के विपरीत एक अन्य प्रसंग में वे लिखते है''–'मुहम्मद साहब मनुष्य मात्र में समानता तथा भाईचारे के प्रवर्त्तक थे' (भाग ४, १३३)। इससे भी आगे बढ़कर इस्लाम की प्रशंसा में वे कहते हैं 'इस्लाम के लोकतन्त्र और समानता ने नरेन्द्र के मन को प्रभावित किया और इस कारण वे एक नया भारत बनाना चाहते थे, जिसका मस्तिष्क वेदान्त का हो और शरीर इस्लाम का। इतना ही नहीं भारत के लिए हिन्दुत्व तथा इस्लाम का मिश्रण अनिवार्य है।' इस विवरण को पढ़कर हिन्दुत्व के नेता विवेकानन्द का कौनसा सन्देश हिन्दू जनता को देना चाहेंगे। हिन्दू–जनता इस्लाम के विचार को विरोधी माने या सहर्ष उसका स्वागत कर उसे गले से लगा ले?

ईसाइयत को लेकर भी स्वामी विवेकानन्द की विचारधारा में स्पष्टता व एकरूपता दृष्टिगत नहीं होती। एक स्थान पर वे कहते हैं 'तुम हमारे लोगों को प्रशिक्षण देते हो, कपड़ा देते हो, पैसे देते हो, पर किसलिए? इसलिए कि यहां आकर तुम हमारे पूर्वजों को और हमारे धर्म को कोसो और गालियां दो।.....परन्तु जब तुम्हारे मिशनरी हमारी खबर लेने लगें, तो उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि यदि सारा भारत उठ खड़ा हुआ और हिन्द महासागर के तल में जमी सारी कीचड़ पाश्चात्य देशों के ऊपर फैंकने लगा, तो जितना तुम हमारे साथ कर रहे हो, उसकी तुलना में वह कुछ भी नहीं होगा। (बायो. पृ. २६–२७)। एक बार स्वामी विवेकानन्द स्वदेश लौट रहे थे। दो ईसाई मिशनरी असभ्यता पूर्वक हिन्दू–धर्म की निन्दा कर रहे थे, स्वामी जी ने आगे बढ़कर एक की गर्दन पकड़ ली और गरजकर बोले 'यदि तुमने फिर मेरे धर्म की निन्दा की तो मैं तुम्हें जहाज से समुद्र में फेंक दूंगा। मिशनरी ने क्षमा मांगी और कहा मुझे छोड़ दो, मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूंगा।

स्वामी विवेकानन्द ने एक बार अपने एक शिष्य से पूछा यदि कोई तुम्हारी माता का अपमान करे तो तुम क्या करोगे? शिष्य ने उत्तर दिया मैं छाती पर चढ़ जाऊंगा और

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

अच्छी तरह सबक सिखाऊंगा। स्वामी जी ने शाबाशी देकर कहा–यदि यही भावना अपनी सच्ची माता 'धर्म' के प्रति हो तो कोई भी हिन्दू ईसाई न बनने पाये.....आये दिन ईसाई मिशनरी तुम्हारे मुंह पर हिन्दू–धर्म को गालियां देते रहते हैं। फिर भी कितने लोग हैं, जिनका खून यह देख सुनकर उबलता है और अपने धर्म की रक्षा के लिए तैयार होते हैं? (बायो. पृ. २१९)। एक स्थान पर ईसाइयत की वास्तविकता को रेखांकित करते हुए स्वामी जी लिखते हैं–''ईसाई सार्वजनिक मातृभाव की बातें करते हैं, किन्तु जो ईसाई नहीं हैं उनके लिए अनन्त नरक का द्वार खुला है'' इस प्रकार ईसाइयों का यह विश्वास कि कोई व्यक्ति तब तक अच्छा और भला नहीं हो सकता, जब तक वह ईसाई न बन जाये, उनकी सार्वजनिक उदारता का पर्दाफाश कर देता है।'' (धर्म रहस्य पृ. ३४)। आश्चर्य है यही विवेकानन्द जो अपने धर्म के प्रति इतना प्रेम रखते हैं और ईसाइयत की असलियत को जानते हैं, फिर भी वे कहते हैं–'वे (ईसाई और मुसलमान) हमें चाहे जितनी घृणा की दृष्टि से देखें, चाहे जितनी पशुता दिखायें, चाहे जितना अत्याचार करें–जैसा कि वे हमारे साथ करते हैं और हमारे लिए चाहे जैसी कुत्सित भाषा का प्रयोग करें, पर हम ईसाइयों के लिए गिरजे और मुसलमानों के लिए मस्जिदें बनवाना नहीं छोड़ेंगे।' (भारत में विवेकानन्द पृ. ११४–११५)

पाठक विचार करें कहां वह अपने धर्म के प्रति उद्दाम प्रेम की भावना और कहां अपने विनाश के लिए उदार आमन्त्रण, इनमें उनका अनुयायी किसको स्वीकार करे और किसको छोड़े? अपने धर्म की दृढ़ता दिखाने वाले विवेकानन्द दूसरी ओर कहते हैं–''जितने प्रकार के धर्म हों, उतना ही संसार के लिए अच्छा है। यदि चार सौ प्रकार के धर्म हों तो और भी अच्छा। क्योंकि इस अवस्था में धर्म पसन्द करने का अवसर तथा क्षेत्र अधिक रहेगा। ईश्वर करे धर्मों की संख्या इतनी बढ़े कि प्रत्येक मनुष्य को अपने लिए और से अलग एक धर्म मिल जाए।'' (प्रेम योग पृ. ६६)। इस वाक्य में क्या धर्म है या क्या दर्शन है, यह एक सामान्य व्यक्ति की समझ से परे है। इसे या तो स्वयं विवेकानन्द समझते होंगे या उनके अनुयायी।

महापुरुष, अवतारवाद एवं **मूर्ति–पूजा** के विषय में भी उनके विचारों में इतना घालमेल है कि आप निर्णय नहीं कर सकते कि उनका कौन सा विचार अन्तिम या निर्णायक है। महात्मा बुद्ध के विषय में वे कहते हैं–''धरती पर जन्म लेने वालों में बुद्ध सबसे महान् थे।'' अपने पत्र में लिखते हैं–''**भगवान् बुद्ध मेरे ईश्वर हैं। इनका कोई ईश्वरवाद नहीं, वे स्वयं ईश्वर थे। इस पर मेरा पूर्ण विश्वास है।**'' (पत्रावलि पृ. १३७)। इससे अधिक प्रशंसा बुद्ध की क्या हो सकती है। इसके विपरीत वे अपने प्राच्य और पाश्चात्य ग्रन्थ में लिखते हैं–**बुद्ध ने हमारा सर्वनाश किया और ईसा ने ग्रीस और रोम का सर्वनाश किया।** (पृ. १५)। अपने एक भाषण में स्वामी विवेकानन्द कहते हैं–**जहां कहीं भी बुद्धदेव पहुंचे वहीं उन्होंने हिन्दुओं द्वारा पवित्र मानी जाने वाली सभी वस्तुओं को मिट्टी में मिला देने का प्रयत्न किया।** (हिन्दू धर्म पृ.३८) अब पाठक निर्णय करें कि बुद्ध ईश्वर हैं या राक्षस? ईसा के विषय में वे कहते हैं–**ईश्वर ने ईसा होकर जन्म लिया** (देववाणी पृ. ४०)। इसको लोकभाषा में कहते हैं–गंगा गये गंगादास, जमुना गये जमुनादास।

मूर्तिपूजा के विषय में भी स्वामी जी के विचार इसी कोटि के हैं। एक ओर वे परमेश्वर का स्वरूप बताते हैं–परमेश्वर नित्य, निराकार तथा सर्वव्यापक है, उसे साकार मानना उसकी निन्दा करना है। (७ पृ.४११)। परन्तु अपने गुरु रामकृष्ण द्वारा मूर्ति की पूजा किये जाने को वे उचित मानते थे। अन्तिम समय में स्वामी विवेकानन्द काली की पूजा करते–करते ही प्राण–त्याग करते हैं। अमरनाथ की गुफा में साष्टांग दण्डवत् करते भावावेश में कांप रहे होते हैं।

अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस के प्रसंग में स्वामी विवेकानन्द अपने सब सिद्धान्त भूल जाते हैं। वे अपने गुरु को संसार का श्रेष्ठ अवतार मानते हैं। इस विषय में वे कहते हैं–भगवान् रामकृष्ण ने आर्य–जाति के वास्तविक धर्म का दिग्दर्शन कराने के लिए भारत में अवतार लिया। (५/१८३)। दूसरी जगह वे लिखते हैं–हजारों वर्षों में प्राचीन काल के अनेक सिद्धपुरुषों के जीवन हमारे सामने आये, परन्तु उनमें से एक भी रामकृष्ण परमहंस की ऊंचाई को न छू सका। (३–३१२)। स्वामी विवेकानन्द रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के पश्चात् प्रकट होने के चमत्कार को स्वीकार करते हैं। एक ओर स्वामी विवेकानन्द हिन्दू–धर्म में अपनी आस्था दिखाते हैं, तो गुरु जी **अल्लाह की जय** कर मुस्लिम साधना का अभ्यास करते हैं तथा **गो–मांस खाने की इच्छा होने पर रामकृष्ण परमहंस मृत कुत्ते के शरीर में प्रविष्ट होकर मरी हुई गाय का मांस खाते हैं।** जब **रामकृष्ण मिशन ने न्यायालय में मिशन के हिन्दू न होने के पक्ष में तर्क दिये थे**, तब इस बात का विशेष रूप से उल्लेख किया था।

देश, समाज–सुधार, आजादी के विषय में भी उनके विचार इसी प्रकार निराशाजनक हैं। आज संघ, विश्वहिन्दू

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

परिषद् स्वामी विवेकानन्द को कितना ही महान् क्रान्तिकारी घोषित करे, परन्तु **क्रान्तिकारियों से उनका कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं था**। हाँ, वे विदेशी शासन के प्रशंसक अवश्य रहे हैं।

स्वामी विवेकानन्द के विचारों के विरोध या समर्थन में उनके साहित्य से पर्याप्त तर्क लिए जा सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में विवेकानन्द एक व्यक्तित्व के रूप में किसी को अच्छे लग सकते हैं, परन्तु यदि उन्हें किसी देश या समाज का आदर्श माना जाए तो संघ, विश्वहिन्दू परिषद् या भाजपा से पूछना होगा कि वे स्वामी विवेकानन्द के कौन से पक्ष को हिन्दुत्व के रूप में स्वीकार करते हैं? क्या उनका पूरा व्यक्तित्व हिन्दुत्व व राष्ट्र का आदर्श का बन सकता है? क्या हिन्दुओं को उनके हिन्दुत्व व राष्ट्र विरोधी पक्ष को भी स्वीकारना होगा? क्या उनका हिन्दुत्व व राष्ट्र विरोधी पक्ष हिन्दुओं व राष्ट्र में विकार और दुर्बलता नहीं लायेगा? क्या हिन्दुत्व व राष्ट्र में भी स्वामी विवेकानन्द की तरह परस्पर विरुद्ध बातों का घालमेल होना चाहिए? उनके हिन्दुत्व व राष्ट्र विरोधी पक्ष से हिन्दुओं व राष्ट्र में परस्पर विरोधी व घातक प्रवृत्तियां जन्म ले रही हैं व लेती रहेंगी। आर्यसमाज के मूर्धन्य संन्यासी स्वामी सत्यप्रकाश ने ठीक ही लिखा है– **''यदि स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में बुद्ध और ईसा दोनों ही ईश्वर हैं, तो भारत में ईसाई-धर्म फैलने पर आपत्ति नहीं होनी चाहिए, पूर्वोत्तर भारत में ईसाइयत के प्रवेश का स्वागत करना चाहिए।''**

आज जब स्वामी विवेकानन्द के आदर्श अपनाने की बात की जाती है, तो सामान्य मनुष्य के मन में यही भाव आता है कि वह कौन से विवेकानन्द को स्वीकार करे? सहसा गीता की अर्जुन की पंक्तियां उसके होठों पर आ जाती हैं–

व्यामिश्रेणेव वाक्येन, बुद्धिं मोहयसीव मे।
तदेकं वद निश्चित्य, येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम्।। गीता ३.२

आप सन्देहात्मक जैसे वाक्य से मेरी बुद्धि को मोहित-सी कर रहे हैं। अतएव कृपया उस एक सिद्धान्त को निश्चित करके कहिये, जिसके द्वारा में कल्याण को प्राप्त हो सकूं।

–धर्मवीर

मनुष्यों को विद्वानों के सकाश से साक्षात्कार और प्रचार करके सब मनुष्यों को समृद्धियुक्त करना चाहिये। –**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.१०।**

आध्यात्मिक चिंतन के क्षण.....

तृष्णा

–रामगोपाल गर्ग

हम सत्व-रज-तम इन गुणों में से जिस-जिस गुण का जितना-जितना अधिक प्रयोग करेंगे उतना-उतना हमारा स्वभाव उसके अनुरूप बनता चला जाएगा। जैसे कि मान लीजिए एक व्यक्ति छ: घण्टे सोता है, किन्तु उसको लगा कि नींद शेष रह जाती है पुन: वह सात घण्टे सोने लग गया। अब भी उसको आलस्य आता है। उसने समझा यह भी थोड़ा ही है, पुन: एक घण्टा और बढ़ा दिया, पुनरपि तृप्ति नहीं हुई। अर्थात् तमोगुण बढ़ता जाता है। इस स्थिति में वह मानता है कि यह स्वभाविक है, जबकि वास्तव में वह स्वभाविक नहीं है, नैमित्तिक है। तो यह नहीं मानना है कि हम अधिक नींद लेकर तृप्त हो जाएँगे।

इस बात पर बहुत बल दिया गया है कि इन्द्रियों के भोग भोगते रहो, भोगते रहो यह मानकर कि इससे मेरी तृष्णा हट जाएँगी तो यह मिथ्या होगा। वास्तव में उलटा होता है। वह भोगता जाता है, इच्छाएँ बढ़ती जाती हैं।

न जातु काम: कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते।। मनु. २/९४

ऐसा कभी नहीं होगा कि भोगों को भोगने से तृप्ति हो जाएगी, अपितु उलटा होगा। तृष्णा तो छोड़ देने से ही हट सकती है, भोगने से तृष्णा नहीं हटती। जब इच्छा रुकनी ही नहीं है, बढ़नी है तो विषयों का सेवन क्यों किया जाए? अत: अच्छी तरह निर्णय हो जाना चाहिए कि विषय भोग से तृष्णा और बढ़ती जाती है, तो उनका सेवन नहीं करना ही उचित है।

वस्तुत: व्यक्ति की बुद्धि में यह बात बैठी रहती है कि ऋषियों ने लिख दिया है, यह उनका अपना मन्तव्य होगा, सबके लिए अनिवार्य नहीं। हो सकता है कि भोगने से हमारी इच्छा पूरी हो जाए। वह सोचता है ये जो विषय भोगों की इच्छाएँ हैं, इन भोगों को भोगकर पूरी कर ली जाएँ, तब पुन: हमको क्यों सताएँगी? ऐसी उनकी बुद्धि बनती है कि भोग लेंगे तो इच्छाएँ नहीं सताएँगी हमको। वस्तुत: उनको यह पता नहीं कि वे आज कम सताती हैं, आगे अधिक सताएँगी। उलटा अभ्यास भी भयंकर होता है। उलटे-उलटे काम करके पुन: जब तक वह उलटे काम नहीं करता उसको संतुष्टि नहीं होती। जिन विषयों में सुख की अनुभूति होती है वे उसका पीछा ही नहीं छोड़ते। दिन में यदि पीछा छूट गया तो रात्रि में याद आयेंगे। अत: व्यक्ति को सदैव सावधान रहकर उन्नति करनी होती है।–**अजमेर। मो-९४१३२२८४३९**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

जिज्ञासा-समाधान-४१

-सत्यजित्

जिज्ञासा ६५-आदरणीय, नमस्ते। सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास से नियोग विषयक जिज्ञासाओं को प्रेषित कर रहा हूँ। कहीं लेख में कुछ धृष्टता प्रतीत हो तो क्षमा चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरी जिज्ञासाओं को, जो संलग्न हैं, पत्रिका में छपें, या न छपें। किन्तु समाधान अवश्य चाहता हूँ। मैं पारिवारिक व जन्म से आर्यसमाजी हूँ और इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैं नियोग संबन्धित लेख से या समाधान से संतुष्ट हूँ या नहीं। आर्यसमाज में नवीन प्रवेशार्थी को ध्यान में रखते हुए समाधान दें, तो आभारी रहूँगा। संलग्न जिज्ञासाओं का समाधान व समयानुकूल उत्तर अपेक्षित है। बहुमूल्य समय में से कुछ समय निकालकर कृतार्थ करने का कष्ट करेंगे, ऐसी अपेक्षा है।

१. सत्यार्थप्रकाश : चतुर्थ समुल्लास के पुनर्विवाह व नियोग प्रकरण में स्पष्ट लिखा है-ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णों में क्षतयोनि स्त्री और क्षतवीर्य पुरुष का पुनर्विवाह नहीं होना चाहिए। इसी आशय को दोहराते हुए आगे पुन: लिखते हैं कि द्विजों में पुनर्विवाह वा अनेक विवाह कभी नहीं होना चाहिए।

प्रश्न-निर्णय सही है, किन्तु उपरोक्त लेख के परिप्रेक्ष्य में प्रश्न है कि आर्यसमाज ने कब व क्यों तथा किन परिस्थितियों में या कारणों से पुनर्विवाह (विधवा विवाह) का समर्थन किया?

२. सत्यार्थप्रकाश में लिखा है-जो ब्रह्मचर्य न रख सकें तो नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर लें। नियोग प्रक्रिया में स्त्री को वीर्यदाता के यहाँ नहीं रहना।

प्रश्न-पुनर्विवाह में स्त्री को भरण-पोषण की चिन्ता नहीं रहती, पति पूरी देखभाल करता है, जबकि नियोग में उसके भरण-पोषण की व्यवस्था कौन करेगा? पति की मृत्यु के बाद नियोग से उत्पन्न बालक के पिता का नाम वैधानिक व मेडिकली भी अंकन में कठिनाई आवेगी।

३. एक विधवा स्त्री दो अपने लिए और दो-दो अन्य चार नियुक्त पुरुषों के लिए दो-दो सन्तान कर सकती है, और एक मृतस्त्री पुरुष भी दो अपने लिए और दो-दो अन्य चार विधवाओं के लिए पुत्र उत्पन्न कर सकता है। ऐसे मिलकर दश-दश सन्तानोत्पत्ति की आज्ञा वेद में है।

प्रश्न-ब्रह्मचर्य की और समाज व्यवस्था की खूब रक्षा (फजीती) है, किन्तु पुनर्विवाह की अनुमति नहीं, क्यों?

४. नियोग को व्यभिचार नहीं कहने का कारण बताया गया है कि बिना नियुक्तों का व्यभिचार कहाता है और नियुक्तों का नहीं। शास्त्रोक्त विधिपूर्वक विवाह होने पर समागम में व्यभिचार, पाप व लज्जा नहीं होती, वैसे ही वेद-शास्त्रोक्त नियोग से व्यभिचार, पाप, लज्जा न मानना चाहिए।

प्रश्न-फिर तो नियुक्त होकर यानि प्रकट रूप से वैश्या के यहाँ जाने में भी व्यभिचार नहीं होगा।

५. आगे स्पष्ट लिखा है-ईश्वर के सृष्टिक्रमानुसार स्त्री पुरुष का स्वाभाविक व्यवहार रुक नहीं सकता, सिवाय वैराग्यवान्-पूर्ण विद्वान् योगियों के।..... रुकावट होने से गुप्त-गुप्त कुकर्म बुरी चाल से होते रहते हैं।

प्रश्न-स्वाभाविक व्यवहार को स्वीकार करते हुए पुनर्विवाह अच्छा उपाय है या कि नियोग? शायद इसी कारण से आर्यसमाज के विद्वानों ने पुनर्विवाह को स्वीकृति देकर प्रारम्भ करवाये होंगे। (सत्यार्थप्रकाश के अगले अनुच्छेद में विवाह की अनुमति भी है।)

६. नियोग पश्चात् पृथक् रहना, संयोग न करना अन्यथा पापी और जाति या राज्य से दंडनीय हो।

प्रश्न-क्या यह संभव है? ऐसे अंतरंग संबन्धों के बाद कोई सम्बन्ध न रहे, यह या तो योगी या वैश्यागामी से ही संभव है।

७. प्रमाण महाभारत से दिये गये हैं।

प्रश्न-महाभारत काल तो आर्यों का पतनकाल माना जाता है। इससे पूर्व कोई उदाहरण?

८. विवाहित पति धर्म के अर्थ परदेश गया हो तो आठ वर्ष और कीर्ति के लिए गया हो तो छ: और धनादि कामना के लिए गया हो तो तीन वर्ष तक बाट देखके पश्चात् नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर ले। जब विवाहित पति आवे तब नियुक्त पति छूट जावे।

प्रश्न-आपकी टिप्पणी चाहता हूं, क्योंकि मेरे मन में तो कुछ पूछने के लिए बचा ही नहीं है।

९. गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के समय पुरुष स्त्री से न रहा जावे तो किसी से नियोग करके उसके लिए पुत्रोत्पत्ति कर दे, परन्तु वैश्यागमन, व्यभिचार न करे।

प्रश्न-समस्त सामाजिक ढांचे व विश्वास, जो परिवार की आधारशिला हैं, को ध्वस्त कर दिया। टिप्पणी दें।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

१०. सत्यार्थप्रकाश में पुन: लिखा है कि मनु जी ने लिखा है कि (सपिण्ड) अर्थात् पति की छ: पीढ़ियों में पति का छोटा व बड़ा भाई अथवा स्वजातीय तथा अपने से उत्तम जातिस्थ पुरुष से विधवा स्त्री का नियोग होना चाहिए।

प्रश्न-वर्तमान समाज में राम-लक्ष्मण के माध्यम से भाभी को माँ समान माना जाने की सीख दी जाती है, जो आदर्श है। उसे समाप्त करके इस व्यवस्था का प्रचार करके रही-सही आर्यसमाज की नैया को और डुबाया जा सकता है। इसके बारे में आपका क्या विचार है?

इसके विपरीत वर्तमान समाज में कुछ उदाहरण ऐसे अवश्य आये हैं, जिनमें किन्हीं परिस्थितियों में बड़े भाई की मृत्यु हो गई और बहू के हाथ की मेहंदी भी नहीं छूटी, तब इस परिस्थिति में छोटे भाई से विवाह करवा दिया गया।

अन्यथा उपरोक्त में तो श्री मुंशीराम जी की आत्मकथा (कल्याण मार्ग का पथिक) जिसमें एक पंडित कहता है- महाराज हमने अपना धर्म कबहूँ नहीं छोड़ा! झूठ बोला, जूआ खेला, गांजा का दम लगाया, दारु चढ़ाया, रिश्वत लिया, चोरी, दगाबाजी की, पर सरकार अपना धर्म कबहूँ नहीं छोड़ा, के सटीक उदाहरण की याद आती है।

-चन्द्रेश कुमार सक्सेना, सुभाष कॉलोनी, शिव मन्दिर के पास, गुना, म.प्र., दूरभाष-०७५४२-२५४८८४

समाधान-नियोग का विषय समय-समय पर उठता रहा है, इसके पक्ष-विपक्ष में चर्चाएं चलती रही हैं। वर्तमान परिवेश, विशेषकर भारतीय परिवेश में नियोग की स्वीकार्यता सार्वजनिक रूप से नहीं हो पाई है। व्यक्तिगत रूप से भी अधिकांश व्यक्ति इसको स्वीकारने व समर्थन करने में अपराधबोध-हीनता-ग्लानि-संकोच-निंदा अनुभव करते हैं। एक बड़ा वर्ग इसका कटु आलोचक है और इसे हास्यास्पद मानता है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में इसका स्पष्ट विधान व समर्थन किया है, इसे वेदोक्त स्वीकारा है। अत: हमारे लिए इस पर विचार करना आवश्यक है। इसके लिए महर्षि के वाक्यों व तात्पर्य को भली प्रकार समझना ही होगा। ऐसा न हो कि महर्षि के अभिप्राय को ठीक तरह न समझ पाने के कारण हम ऋषि की (व परोक्ष रूप से वेद की) आलोचना करके ऋषिद्रोह व वेदद्रोह का पाप कर बैठें।

प्रश्नकर्त्ता को नियोग के समर्थन पर भी आपत्ति है व पुनर्विवाह के निषेध पर भी आपत्ति है। दोनों की तुलना में उन्हें पुनर्विवाह का विकल्प ही ठीक प्रतीत हुआ है, नियोग उन्हें स्वीकार्य नहीं है। अब उनके प्रश्न क्रम के अनुरूप आक्षेपों को स्पष्ट करने व महर्षि के तत्सम्बन्धी लेखों को भी स्पष्ट कर समाधान का प्रयास किया जाता है।

१. प्रथम प्रश्न यह है कि जब महर्षि दयानन्द ने द्विजों में पुनर्विवाह का निषेध स्पष्ट लिखा है, फिर आर्यसमाज ने पुनर्विवाह (विधवा-विवाह) का समर्थन क्यों किया? इस प्रश्न को उठाकर प्रश्नकर्त्ता परोक्ष रूप से यह कहना चाहता है कि नियोग-व्यवस्था अनुचित लगी होगी, तभी तो आर्यसमाज द्वारा पुनर्विवाह (विधवा-विवाह) का समर्थन किया गया। प्रश्नकर्त्ता ने यहां द्विजों में क्षतयोनि-स्त्री व क्षतवीर्य-पुरुष के पुनर्विवाह निषेध को सही निर्णय कहा है। साथ ही प्रश्न २ में नियोग की अपेक्षा पुनर्विवाह को उचित स्वीकार किया है।

अब प्रथम यह विचार किया जाना चाहिए कि महर्षि ने पुनर्विवाह का निषेध किन के लिए व क्यों किया? और आर्यसमाज द्वारा समर्थित किया जा रहा पुनर्विवाह (विधवा विवाह) महर्षि के मन्तव्यों से विरुद्ध है या नहीं?

महर्षि के वचनों से इतना तो सीधे-सीधे पुष्ट होता है कि वे 'पुनर्विवाह' को स्वीकारते थे-''**प्रश्न**-स्त्री और पुरुष का बहुविवाह होना योग्य है, वा नहीं? **उत्तर**-युगपत् न। अर्थात् एक समय में नहीं। **प्रश्न**-क्या समयान्तर में अनेक विवाह होना चाहिए? **उत्तर**-हाँ''।-सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास।

इसी के आगे मनुस्मृति का प्रमाण-'**या स्त्री त्वक्षत.....**' देते हुए महर्षि लिखते हैं-''जिस स्त्री व पुरुष का पाणिग्रहणमात्र संस्कार हुआ हो और संयोग (न हुआ हो) अर्थात् अक्षतयोनि स्त्री और अक्षतवीर्य पुरुष हो, उनका अन्य स्त्री वा पुरुष के साथ पुनर्विवाह होना चाहिए। किन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णों में क्षतयोनि-स्त्री क्षतवीर्य-पुरुष का पुनर्विवाह न होना चाहिए''। महर्षि के इस वचन से प्रथम दृष्ट्या यह भाव निकलता है कि द्विजों में विवाह संस्कार के बाद जिन स्त्री-पुरुषों का शारीरिक संयोग न हुआ हो, वे ही पुनर्विवाह कर सकते हैं। जिनका विवाह संस्कार के बाद शारीरिक सम्बन्ध हो गया हो, उनका पुनर्विवाह न हो, फिर इनके लिए नियोग की व्यवस्था स्वीकृत मानी जाती है।

महर्षि द्वारा द्विजों में क्षतयोनि-स्त्री व क्षतवीर्य-पुरुष का पुनर्विवाह पूर्णतया निषिद्ध प्रतीत होते हुए भी पूर्णतया निषिद्ध नहीं माना जाना चाहिए। महर्षि का अभिप्राय पूर्ण निषेध करने का नहीं था। इसके लिए महर्षि के इसी से सम्बद्ध कुछ आगे के वचन पठनीय हैं। सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास में ही आगे निम्नलिखित प्रश्न-उत्तर आया है-

''**प्रश्न**-पुरुष को नियोग करने की क्या आवश्यकता

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

है, क्योंकि वह दूसरा विवाह करेगा? **उत्तर–हम लिख आये हैं**, द्विजों में स्त्री और पुरुष का एक ही बार विवाह होने में **न्याय** और विधवा स्त्री के साथ कुमार पुरुष और कुमारी स्त्री के साथ मृतस्त्री(क) पुरुष के विवाह होने में **अन्याय अर्थात् अधर्म** है। जैसे विधवा स्त्री के साथ पुरुष विवाह नहीं किया **चाहता,** वैसे ही विवाह और स्त्री के समागम किये हुए पुरुष के साथ विवाह करने की **इच्छा** कुमारी भी नहीं करेगी। जब विवाह किये हुए पुरुष को कोई कुमारी कन्या और विधवा स्त्री का ग्रहण कोई कुमार पुरुष न करेगा तब पुरुष और स्त्री को नियोग करने की आवश्यकता होगी। और **यही धर्म है कि जैसे के साथ वैसे ही का सम्बन्ध होना चाहिए।**''

महर्षि का यह वचन पूर्व वचन से सम्बद्ध है व उसी को कारण सहित स्पष्ट कर रहा है। महर्षि ने यहां '**हम लिख आये हैं.....**' इस वाक्य को लिख कर उसी पूर्व वचन की ओर संकेत किया है जिसमें क्षतयोनि–वीर्य द्विजों के पुनर्विवाह का निषेध है। महर्षि का तात्पर्य यहां स्पष्ट है कि विधुर पुरुष का कुमारी स्त्री से व विधवा स्त्री का कुमार पुरुष से पुनर्विवाह नहीं होना चाहिए, क्योंकि असमानों का विवाह अन्याय–अधर्म है। यहां महर्षि के वचनों से स्पष्ट है कि वे क्षतयोनि विधवा स्त्री व क्षतवीर्य विधुर पुरुष के परस्पर विवाह का निषेध नहीं कर रहे हैं। दोनों क्षतयोनि–वीर्य विधवा–विधुर हों तो पुनर्विवाह में अन्याय–अधर्म नहीं होगा, यह जैसे के साथ वैसे ही का सम्बन्ध है, अतः उसका निषेध नहीं है। महर्षि के इस मन्तव्य के अनुरूप अब पुनर्विवाह के निषेध को यूं समझना चाहिए 'द्विजों में क्षतयोनि विधवा का कुमार पुरुष से और क्षतवीर्य विधुर का कुमारी स्त्री से पुनर्विवाह नहीं होना चाहिए'। किन्तु द्विजों में क्षतयोनि–वीर्य विधवा–विधुर का पुनर्विवाह तो हो सकता है।

महर्षि के उपर्युक्त वचनों में विधुर–विधवा का कुमारी–कुमार से विवाह होना अन्याय–अधर्म कहा गया है। इसके पीछे महर्षि ने एक कारण यह भी लिखा है कि 'कुमार किसी विधवा से विवाह नहीं **चाहता** व कुमारी किसी विधुर से विवाह की **इच्छा** नहीं करेगी'। अर्थात् स्त्री–पुरुष की इच्छा के विपरीत होने से यह अन्याय–अधर्म कहलाता है। यह एक व्यापक सर्वमान्य बात है। किन्तु इसके अपवाद भी हो सकते हैं, होते हैं। इच्छा–सहमति–स्वीकार्यता का न होना ही यहां पुनर्विवाह के निषेध का मूल कारण है। यह एक महत्वपूर्ण बात है। परस्पर इच्छा–सहमति–स्वीकार्यता प्रायः कुमार–कुमारी में होती है; कुमार की विधवा से व कुमारी की विधुर से प्रायः नहीं होती। यदि अपवाद रूप में कुमार या कुमारी की इच्छा–सहमति–स्वीकार्यता विधवा या विधुर से हो, तो फिर इसे अन्याय–अधर्म नहीं कहा जा सकता।

इस स्पष्टीकरण के बाद पुनर्विवाह का पूर्ण निषेध मात्र–'इच्छा विरुद्ध' होने में ही समझना चाहिए। परस्पर इच्छा–सहमति–स्वीकार्यता होने पर अपवाद रूप में निम्नलिखितों का भी पुनर्विवाह हो सकता है–(क) क्षतयोनि–वीर्य विधवा–विधुर का, (ख) विवाह विच्छेद हुए क्षतयोनि–वीर्य स्त्री–पुरुष का (ग) विवाह विच्छेद हुए क्षतयोनि–वीर्य स्त्री–पुरुष का कुमार–कुमारी से। (घ) क्षतयोनि–वीर्य विधवा–विधुर का कुमार–कुमारी से।

इस दृष्टि से देखें तो आर्यसमाज द्वारा समर्थित पुनर्विवाह इन श्रेणियों से बाहर नहीं जायेंगे, अतः इन्हें करवाना महर्षि के मन्तव्यों के विपरीत नहीं समझना चाहिए। हां, इसके विपरीत यदि असमानों का अनिच्छापूर्वक विवाह करवाया जाये, तो उसे अनुचित ही समझना चाहिए। इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा किया गया पुनर्विवाह का समर्थन महर्षि के प्रतिकूल प्रतीत नहीं होता। हो सकता है कि अनेक आर्यसमाजियों/आर्यसमाजों ने प्रश्नकर्त्ता के समान महर्षि द्वारा द्विजों के पुनर्विवाह को निषिद्ध मानते हुए भी नियोग को निंदित–अस्वीकार्य मानने के कारण पुनर्विवाह को ही उपाय के रूप में देखा हो और उसका समर्थन किया हो।

महर्षि के क्षतयोनि–वीर्य द्विजों के पुनर्विवाह निषेध को क्षतयोनि–वीर्य द्विजों में पुनर्विवाह के पूर्णतः निषेध के रूप में देखने वाले जो व्यक्ति आज के क्षतयोनि–वीर्य द्विजों में पुनर्विवाह का पूर्णतः निषेध करते हैं, वे भी क्षतयोनि–वीर्य शूद्रों के पुनर्विवाह का तो समर्थन करते हैं। यदि इसे कुछ देर के लिए माना भी जाए, तो आज जो द्विज कहलाते हैं, जन्मानुसार को छोड़ भी दें, कर्मानुसार भी जिन्हें द्विज कहा जाता है, उनमें से बहुत कम वास्तविक द्विज होते हैं। वे द्विजों जैसे कार्य करते हुए भी शूद्रवत् होते हैं। सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास के प्रारम्भ में मनुस्मृति के अनुसार गृहाश्रम में प्रवेश की योग्यता कम से कम एक वेद का सांगोपांग पढ़ा होना व अखण्डित ब्रह्मचर्य का होना लिखी है। तो जो इस योग्यता के बिना विवाह करते हैं, वे द्विजों के कर्म करते हुए भी शूद्रवत् हैं। मनुस्मृति २.१६८ का श्लोक '**योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः।।**' को महर्षि ने संस्कारविधि विवाह प्रकरण व सत्यार्थप्रकाश तृतीय समुल्लास में उद्धृत किया है। अतः जो द्विज वेद को नहीं पढ़ा है, उसे शूद्र कहा जा सकता है, भले

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

ही वह द्विजों के कर्म कर रहा हो। इस प्रकार आज के अधिकांश गृहस्थी शूद्र/शूद्रवत् हैं और शूद्रों में पुनर्विवाह का निषेध महर्षि ने नहीं किया है। अत: आजकल जो तथाकथित द्विजों के पुनर्विवाह आर्यसमाज द्वारा समर्थित हैं, वे वस्तुत: द्विजों के न मानकर शूद्रों के माने जायें, तो भी आर्यसमाज द्वारा इन पुनर्विवाहों का समर्थन महर्षि के मन्तव्यों के अनुकूल माना जा सकता है, उचित माना जा सकता है। जो वास्तविक द्विज हैं, और अपने को उसी आदर्श स्थिति में बनाये रखने के लिए संकल्पित हैं, उन द्विजों के लिए क्षतयोनि-वीर्य होने पर पुनर्विवाह न करने का नियम लागू रहेगा ही।

द्विजों में क्षतयोनि-वीर्य स्त्री-पुरुषों के पुनर्विवाह के निषेध वाले महर्षि के वचन में कई व्यक्ति 'क्षतयोनि-वीर्य' पर मुख्य रूप से केन्द्रित होते हैं। इस प्रकार वे द्विजों में पुनर्विवाह का पूर्ण निषेध करते हैं। यदि इतना ऊंचा आदर्श रखा जाये तो पुनर्विवाह ही क्यों, प्रथम विवाह पर भी यह बात घटानी चाहिए। जो व्यक्ति द्विजों में क्षतयोनि-वीर्य स्त्री-पुरुषों के पुनर्विवाह का पूर्णत: निषेध मानते हैं, वे क्षतयोनि-वीर्य स्त्री-पुरुष के प्रथम विवाह का भी पूर्णत: निषेध करते हैं या नहीं? जिनका पाणिग्रहण संस्कार नहीं हुआ है, वे भी क्षतयोनि-वीर्य हो सकते हैं, होते हैं। ऐसे स्त्री-पुरुषों के लिए क्या विवाह पूर्णत: निषिद्ध माना जायेगा? क्षतयोनि-वीर्य स्त्री-पुरुषों के प्रथम विवाह में जिन्हें आपत्ति नहीं है, उन्हें क्षतयोनि-वीर्य विधवा-विधुरों के विवाह में तो आपत्ति होनी ही नहीं चाहिए। विवाह व्यवस्था वंश परंपरा चलाने व व्यभिचार-गर्भपातादि दुष्कर्म रोकने के लिए है। यदि ऐसे स्त्री-पुरुषों का विवाह नहीं होगा, तो ये प्रयोजन सिद्ध न होकर अव्यवस्था होगी। अत: इच्छा-सहमति से किये गये क्षतयोनि-वीर्य स्त्री-पुरुषों के विवाह भी जैसे मान्य हैं, उचित हैं, वैसे ही पुनर्विवाह भी मान्य होना चाहिए, यह उचित प्रतीत होता है, महर्षि के मन्तव्य के अनुरूप है।

ऐसे में अब यह प्रश्न नहीं बचना चाहिए कि आर्यसमाज ने कब से पुनर्विवाह का समर्थन किया। प्रारंभ से ही आर्यसमाज इसका समर्थक रहा है क्योंकि महर्षि भी इसके समर्थक रहे हैं। पहले असमर्थक रहा हो, तब तो प्रश्न हो सकता है कि कब समर्थन किया।

२. द्वितीय प्रश्न यह मानकर दिया गया है कि महर्षि द्वारा पुनर्विवाह की स्वीकृति नहीं है, मात्र नियोग ही उपाय बचता है। प्रश्न है-स्त्री के भरण पोषण की दृष्टि से पुनर्विवाह ठीक है, नियोग में भरण-पोषण कैसे होगा? प्रथम तो यहां यह ध्यान में रखना चाहिए कि नियोग सबके लिए अनिवार्य नहीं है, वह स्वैच्छिक है और आपातकालीन व्यवस्था है। दूसरा यह नियोग उनके लिए है जो ब्रह्मचर्य न रख सकें व सन्तान चाहते हों, भरण-पोषण की समस्या उनके साथ नहीं है। स्त्री या पुरुष जिस परिवार/कुल में हैं, वहां की धन-सम्पत्ति उनकी अपनी-अपनी है, आय के स्रोत उनके अपने-अपने हैं, वे उससे अपना-अपना भरण-पोषण करेंगे।

प्रश्नकर्त्ता के मन में आज की वह सामाजिक स्थिति है, जहां स्त्रियां घर पर ही कार्य करती हैं, उन्हें वेतन आदि नहीं मिलते। प्राचीन द्विज स्त्रियां जो स्वयं द्विजों का कार्य करती थीं व आज की सेवारत स्त्रियां जो स्वयं आर्थिक रूप से समर्थ होती हैं, उन्हें भरण-पोषण की समस्या नहीं रहती। हां, जिन स्त्रियों को यह समस्या है और वे इस कारण पुनर्विवाह करना चाहती हैं, तो कर सकती हैं। महर्षि दयानन्द ने पुनर्विवाह का पूर्ण निषेध नहीं किया है, यह प्रथम प्रश्न के समाधान में किये स्पष्टीकरण के समान समझना चाहिए। यही बात सुरक्षा के संदर्भ में भी समझ लेनी चाहिए। यदि कोई विधवा स्त्री अपनी सुरक्षा व सम्मान को रखने में असमर्थ है और वह पुनर्विवाह चाहती है, तो इसमें नियोग-व्यवस्था आड़े नहीं आती।

प्रश्नकर्त्ता ने नियोगज सन्तान के **वैधानिक व मेडिकल अंकन** में कठिनाई का दोष भी दिखाया है। वैदिक व्यवस्था में नियोगज सन्तान उसी स्त्री या पुरुष की कहलाती है जिसके लिए नियोग किया गया होता है। चूंकि वैदिक व्यवस्था में नियोग भी विवाह के समान अन्यों की सूचना-जानकारी पूर्वक किया जाता है, अत: इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। सम्पत्ति का अधिकार भी इसी अनुसार माना जाता है। इस सन्दर्भ में सत्यार्थप्रकाश चतुर्थसम्मुलास के ये दो वचन द्रष्टव्य हैं-''**उदीर्ष्व नार्यभि**.....'' ऋग्वेद १०.१८.८ के अर्थ में महर्षि लिखते हैं-''तुझ विधवा के पुन: पाणिग्रहण करने वाले नियुक्त पति के सम्बन्ध के लिए नियोग होगा तो (इदम्) यह (जनित्वम्) जना हुआ बालक उसी नियुक्त पति का होगा और जो तू अपने लिये नियोग करेगी तो यह सन्तान (तव) तेरा होगा''। महर्षि आगे सम्पत्ति के विषय में लिखते हैं-''जैसा 'औरस' अर्थात् विवाहित पति से उत्पन्न हुआ पुत्र पिता के पदार्थों का स्वामी होता है, वैसे ही 'क्षेत्रज' अर्थात् नियोग से उत्पन्न हुए पुत्र भी मृतपिता के दायभागी होते हैं''। इस प्रकार नाम व सम्पत्ति की वैधानिक व्यवस्था रहेगी, कोई कठिनाई नहीं होगी। आधुनिक मेडिकल अंकन/पहचान में भी कोई कठिनाई होगी, क्योंकि यह पूर्व ज्ञात होता

शेष पृष्ठ २० पर.....

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

कुछ तड़प-कुछ झड़प

-राजेन्द्र जिज्ञासु

रोजड़ से एक शुभ समाचार-वानप्रस्थ साधक आश्रम रोजड़ में वर्ष भर कुछ न कुछ कार्यक्रम चलता ही रहता है। यह अच्छी बात है। मान्य श्री दयालमुनि जी द्वारा अनूदित महर्षि के वेदभाष्य का बृहत् खण्ड गुजराती में प्रकाशित करके इस संस्था ने एक स्मरणीय कार्य करके यश लूटा है। सुना है कि वहाँ दो-तीन बड़े हाल बनवाये गये हैं। बड़े-बड़े व्यक्ति तथा संस्थायें सहस्रों रुपये किराया भाड़ा देकर इन हालों में अपने कार्यक्रम आयोजित करने की मांग करते रहते हैं, परन्तु वानप्रस्थ साधक आश्रम इस अर्थ-लोभ के जाल को अब तक तार-तार करता आया है। आगे के लिये भी आचार्य ज्ञानेश्वर जी ने यह घोषणा की है कि इन भवनों में वेद-गोष्ठियाँ, शिविर, प्रवचन ही आयोजित हो सकेंगे। इन्हें भाड़ालय नहीं बनने दिया जायेगा। मैं इस निर्णय पर आचार्य जी तथा उनके सहयोगियों को बधाई भेंट करता हूँ। दिल्ली आदि नगरों में विवाह-शादी के लिये मन्दिर किराये पर चढ़ाए जाते हैं। समाज मन्दिर सूने-सूने हो गये, क्यों? मिशन गौण व तुच्छ हो गये। भाड़ालय वालों का व्यापार चल पड़ा।

एक दुःखद समाचार-यह भी सूचना मिली है कि आर्यवन विकास रोजड़ में एक अंग्रेजी पब्लिक स्कूल भी खुल गया है। पब्लिक स्कूल की कमाई ने आर्यसमाज को अन्धा कर दिया है। जालन्धर में कुछ वर्ष पूर्व एक पत्रकार ने यह खरी बात कही थी कि पब्लिक स्कूल खोलकर आर्यसमाज पब्लिक से कटता गया। यह स्कूलों के कैंसर का चमत्कार है कि पंजाब से आर्यसमाज का नाम तक मिट चुका है। बठिण्डा, तपा, रामाँ, बरनाला, संगरूर, धूरी से लेकर पठानकोट तक जाकर कोई भी देख ले। श्री शिवगुण बापू जी ने जब मुझे आर्यवन विकास दिखाया था तो यह नहीं कहा था कि यहाँ हम स्कूल चलायेंगे। उनके सामने वैदिक मिशन, यज्ञ और गोधन मुख्य था। अब भी संचालक स्कूल को कहीं अन्यत्र ले जायें तो ठीक है। आर्यसमाज को इस कैंसर से बचाने वाले आगे आयें।

मेरी भूल-उसका सुधार-राधा स्वामी सम्प्रदाय के एक गुरु 'हजूर जी महाराज' (श्री शिवव्रत लाल वर्मन) ने भी महर्षि की एक छोटी सी जीवनी उर्दू में लिखी थी। उसमें कुछ आपत्तिजनक बातों का उत्तर देने के लिये मुझे कहा गया था। मैंने 'आर्य मर्यादा' में उसका उत्तर दिया था। पुस्तक मैंने लौटा दी। स्मृतिदोष से (पुस्तक एक ही बार तो पढ़ी थी) मैंने कुछ व्याख्यानों में तथा एक लेख में उसकी चर्चा करते हुए यह बताया कि श्री शिवव्रतलाल ने बरेली में मुंशीराम जी के साथ ऋषि को सुना तो उनका जीवन बदल गया। बरेली में भी मैंने कहा था।

किसी कृपालु ने आर्य जाति के हित के लिये उस सारी पुस्तक को हाथ से लिखकर मुझे कृतार्थ कर दिया। इन दिनों ऋषि जीवन पर कार्य करते हुए मुझे इसका ध्यान आ गया। श्री शिवव्रतलाल जी ने बरेली की चर्चा तो की है, परन्तु ऋषि दर्शन वहाँ नहीं किये थे। मुझे अपनी भूल पर खेद है। जब ऋषि सन् १८७९ में प्रयाग आये थे तो शिवव्रतलाल जी वहाँ पढ़ते थे। तब बहुत से युवक उनको सुनकर सुपथगामी बने। शिवव्रतलाल जी इस घटना का सन् भूलवश कुछ और ही लिख गये। जांच पड़ताल से मैंने जान लिया कि यह घटना महर्षि की अन्तिम प्रयाग यात्रा के समय की है।

जुगलकिशोर माथुर नाम का एक युवक वर्मन जी का सहपाठी और घनिष्ठ मित्र था। वह ऋषि का व्याख्यान सुनकर लौटा तो शिवव्रतलाल जी के सामने व्याख्यान शैली, ऋषि के तर्कों व व्यक्तित्व की भूरि-भूरि प्रशंसा की। शिवव्रतलाल तो सभा में गये नहीं थे। उस व्याख्यान में मांसाहार का घोर खण्डन सुनकर कई युवकों ने मांसाहार छोड़ने का व्रत लिया। श्री जुगलकिशोर तथा शिवव्रतलाल जी भी घोर मांसाहारी थे। अपने मित्र की प्रबल प्रेरणा से व महर्षि की मौलिक युक्तियों से प्रभावित होकर आपने भी जुगल किशोर के साथ मिलकर तत्काल मांसाहार छोड़कर शाकाहारी बनने की दृढ़ प्रतिज्ञा ले ली। मुझे एतद्विषयक अपनी मुख्य भूल का सुधार करना था। इस पुस्तक की कुछ और बातें फिर कभी।

साधु तुलसीदेव पर ऋषि की छाप-तड़प-झड़प के नियमित पाठक श्री साधु तुलसी देव जी के नाम से परिचित हैं। आप ऋषि द्वेषी रहे पं. श्रद्धाराम के उत्तराधिकारी थे। आपने अपने गुरु की जीवनी में ऋषि दयानन्द के विरोध में तो लिखा ही, कई बातें कतई निराधार भी लिख दीं। इसका एक उदाहरण देना बहुत रोचक होगा। आपने लिखा है- जहाँ-जहाँ ऋषि दयानन्द गये, पं. श्रद्धाराम ने उनका वहाँ-वहाँ पीछा किया। ऋषि स्यालकोट गये तो श्रद्धाराम वहाँ उनका पीछा करते पहुँच गये। तथ्य यह है कि ऋषि जी

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

स्यालकोट तो क्या स्यालकोट जनपद में भी कहीं नहीं गये और यह भी सत्य नहीं कि जहाँ-जहाँ स्वामी जी महाराज गये, वहीं-वहीं पं. श्रद्धाराम पहुँचे। गिनती के तीन-चार स्थानों पर ऋषि के आगे-पीछे गये।

साधु तुलसीदेव जी ने गुरु की जीवनी में तो यह संकेत तक नहीं दिया कि उसने भी ऋषि दर्शन किये और उन्हें सुना, परन्तु उसके जन्म स्थान भदौड़ के धर्मवीर महाशय रौनकराम के सुपुत्र स्व. चन्द्रगुप्त जी को मिलाने के लिये बरनाला के श्री जगदीश कभी मुझे ले गये थे। तब चन्द्रगुप्त जी ने मुझे कुछ पुराने पत्रों के कुछ अंक दिये। उनमें से तुलसीदेव जी लिखित एक ट्रैक्ट अब मेरे सामने आया। सन् १९३१ में प्रकाशित हरिज्ञान मन्दिर लाहौर की इस रिपोर्ट में साधु जी ने अपना भी आत्म परिचय दिया है। इसके पृष्ठ दस पर साधु जी लिखते हैं-''यहाँ ही श्री स्वामी दयानन्द जी के दर्शन करने व व्याख्यान सुनने का अवसर मिला था।''

इस एक वाक्य के कारण यह वृत्तान्त हमारे लिये एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। यह घटना लुधियाना की है। वहां सन् १८७७ में ऋषि पधारे थे। तब साधु जी की आयु २१ वर्ष की थी। जीवन की अन्तिम वेला में श्रद्धाराम को ऋषि का विरोध करने के लिये पश्चात्ताप हुआ। उसका पश्चात्ताप-पत्र श्री डॉ. धर्मवीर जी तथा पं. विरजानन्द जी की अविस्मरणीय खोज है, जो परोपकारिणी सभा के पास सुरक्षित है। साधु जी ने अपने किये पर पश्चात्ताप करते हुए जीवन की अन्तिम वेला में महर्षि का आदरपूर्वक स्मरण किया है। मैं यह दस्तावेज भी अति शीघ्र सभा को ही सौंप दूँगा।

इसे पढ़कर मुझे साधुजी के जीवन की एक विशेष घटना का रहस्य समझ में आ गया। कविराज हरनामदास का औषधालय-कार्यालय भी हरिज्ञान मन्दिर में था। दिल्ली आकर कविराज जी एक मासिक 'ज्ञान गंगा' नाम से निकालते थे। उसमें आपने अपना एक संस्मरण दिया था। साधु जी को एक दिन पूछ लिया गया कि यह मन्दिर तो आपका है, परन्तु आप कभी भी मूर्तिपूजा नहीं करते, आरती नहीं उतारते, इसका कारण? साधु जी ने कहा, गुरुजी ने आज्ञा दी तो मैंने इस हरिज्ञान मन्दिर को सम्भाल लिया। मैं मूर्तिपूजा नहीं मानता। चढ़ावे का मुझे लोभ नहीं। मेरे निर्वाह के लिये चिकित्सा करवाने वाले लोग मुझे सब कुछ दे देते हैं।

पाठकवृन्द! श्रद्धाराम ने मूर्त्तिपूजा का झण्डा उठाकर ऋषि का विरोध आरम्भ किया। था तो वह नास्तिक, परन्तु तुलसी देव तो नास्तिक साधु नहीं थे, फिर मूर्त्तिपूजा से इतनी दूरी कैसे हो गई? मानना ही पड़ेगा कि यह महर्षि दयानन्द के व्याख्यानों को सुनने का फल था। ऋषि की अमिट छाप ने समय पाकर अपना रंग दिया। मेरे द्वारा अनूदित-सम्पादित लक्ष्मण जी के ऋषि जीवन में पाठक ये सारे प्रमाण पायेंगे। साधु तुलसीदेव महन्त होकर आरती क्यों नहीं उतारते, मूर्त्तिपूजक क्यों नहीं? मेरे लिये यह एक गुत्थी थी, जो अब सुलझ गई।

सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन के विषय में- सत्यार्थप्रकाश हमारा धर्म ग्रन्थ है। मुझे यह अच्छा नहीं लगता कि इस अमर ग्रन्थ के बारे में कुछ लोग भांति-भांति की बोलियाँ बोलकर आर्यसमाज का उपहास उड़ायें। प्रत्येक वक्ता तथा प्रत्येक लेखक सत्यार्थप्रकाश का अधिकारी विद्वान् नहीं हो सकता। उदयपुर से बहुत भद्दी भाषा में आर्यसमाज में उत्तेजना फैलाने के लिये कई पुस्तकें छाप-छापकर बांटी गईं। प्रयोजन सत्यार्थप्रकाश की रक्षा व प्रचार-प्रसार नहीं था। इस अभियान का उद्देश्य परोपकारिणी सभा तथा उससे जुड़े विद्वानों की निन्दा के सिवाय कुछ भी नहीं था।

जो व्यक्ति यह पम्पलेट बाँटता, छपवाता व भेजता रहा है, उसने आज पर्यन्त सत्यार्थप्रकाश की महिमा व रक्षा पर एक भी मौलिक टैक्ट नहीं लिखा। परोपकारिणी सभा के पास तो श्री मोहन जी जैसा सत्यार्थप्रकाश का मर्मज्ञ विद्वान् है, जो मौन रहकर इस अमर ग्रन्थ की रक्षा करता है। जब श्री पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक का संस्करण निकला, तब श्री आचार्य विरजानन्द जी, डॉ. धर्मवीर जी तथा इन पंक्तियों का लेखक अलग-अलग उनसे बहालगढ़ में मिले। उन्हें उनकी कुछ भयङ्कर भूलों के बारे में बताया। उनकी महानता थी कि उस वयोवृद्ध विद्वान् ने हमारे द्वारा सुझाई गई भूलों का सुधार करना स्वीकार किया। तब विरजानन्द जी ने तथा मैंने उनको धन्यवाद देते हुए उन भूलों पर कुछ लिखा भी। हमारे लेख इसके साक्षी हैं।

अब मैं किसी को दोष न देता हुआ उदयपुरी मित्रों से पूछूंगा कि तब आप में से कौन आगे आया? स्वामी श्री विद्यानन्द जी ने अपने संस्करण के लिये सहयोग मांगा। मैं उनके निवास पर जाकर कई पुस्तकें देकर आया। उन्होंने भी मीमांसक जी की एक भयङ्कर भूल दोहरा दी। क्या कोई बोला? मीमांसक जी की एक भयङ्कर भूल तो मेरे सामने तब आई, जब डॉ. सुरेन्द्र जी ने मेरे से कुछ पूछा तो मैं भिन्न-भिन्न संस्करणों का मिलान करने बैठा। विरजानन्द जी, सुरेन्द्र जी, धर्मवीर जी ने या परोपकारिणी सभा ने तो वह भूल नहीं की। उदयपुर से, टांडा से, दिल्ली से या मुम्बई से किसी को

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

पता ही न चला कि क्या-क्या भूलें (जाने या अनजाने से) कर दी गईं हैं।

इन मित्रों ने व्यर्थ के वार-प्रहार करने में कोई आगा-पीछा नहीं देखा। जब दिल्ली में शरारती तत्त्वों ने सत्यार्थप्रकाश पर केस कर दिया, तब दिल्ली वालों ने फोन करके विशेष रूप से मुझे बुलवाया। मैं उस विराट् सभा में सबसे पीछे जाकर बैठा। सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन के एक परखे योद्धा आचार्य हरिदेव मुझे उठाकर आगे ले गये। उन्होंने और उनके बाद एक-एक ने यह कहा कि जिज्ञासु जी के होते हमें केस को जीतने की कोई चिन्ता नहीं। यह हमारे वकीलों को सब आक्षेपों के उत्तर व प्रमाण उपलब्ध करवायेंगे। मेरे मित्र भद्रकाम जी उस दृश्य के साक्षी हैं। श्री लाजपतराय जी ने भी मेरे बारे में तब ऐसे ही भाव रखे।

केस करने वालों ने केस करते हुए यहाँ तक लिखा कि कुछ बातें जो ऋषि ने लिखी हैं-वे हमारे किसी ग्रन्थ में हैं ही नहीं। श्री अजय जी तथा वकीलों के पूछने पर मैंने कहा कि मैं यहाँ पर नहीं कोर्ट में ही केस चलने पर एक-एक समीक्षा की पुष्टि में इस्लामी साहित्य के प्रमाण दूँगा। उस सभा में वेशपंथी भी आये थे। तब परोपकारिणी सभा के घोर विरोधियों ने दायें-बायें से मुझ पर दबाव बनाकर यह कहा कि हमें कुरान की वह तफसीर दिखा दो, जिससे ऋषि ने कुरान की आयतों के अर्थ दिये हैं।

तब मैंने उन सब महानुभावों को कहा कि वह तफसीर परोपकारिणी सभा को मैंने सौंप दी है। डॉ. धर्मवीर जी से मिलिये। वैसे मैंने दिल्ली में ही ऐसी तीन तफसीरें कोर्ट में पेश करने के लिये श्री राजवीर जी आदि को सौंप दी थीं। जिसने गत सत्तर वर्षों के पश्चात् सर्वथा नये-नये प्रमाणों से युक्त 'कुरान-सत्यार्थप्रकाश के आलोक में' तथा 'सत्यार्थप्रकाश क्या और क्यों' दिया। इन उदयपुरियों ने तो सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन के उस सैनिक पर निशाने साधे। उस आन्दोलन में सत्याग्रह के लिये नाम देने वाले सम्भवत: अब दो ही सैनिक मिलेंगे-एक श्री यशपाल जी (मेरे ज्येष्ठ भ्राता) तथा दूसरा मैं। वह तब दसवीं में पढ़ते थे और मैं नवम कक्षा का विद्यार्थी था। मेरे एक ग्रन्थ में यह रोचक-प्रेरक घटना दी हुयी है। हमारे पिताजी को तब किसी ने यह पता दिया था।

तब विद्यार्थी काल में ही मैंने सत्यार्थप्रकाश विषयक सैकड़ों लेख पढ़े तथा पचाये। कई पुस्तकें पढ़ डालीं। जब स्वामी वेदानन्द जी जैसे ज्ञान-समुद्र मूर्धन्य विद्वान् ने सन् १९५४-५५ में स्थूलाक्षरी सत्यार्थप्रकाश का कार्य आरम्भ किया तो आज से ५८ वर्ष पूर्व श्री महाराज ने कुछ अलभ्य पुस्तकें उपलब्ध करवाने का कार्य इस अनुभवहीन सेवक को सौंपा। मैंने वह दायित्व शान से निभाया। उन पुस्तकों में ही पादरी जे.एल.ठाकुरदास की सत्यार्थप्रकाश विषयक पुस्तक थी, जिसकी उस ग्रन्थ में बार-बार चर्चा है। मैंने सत्यार्थप्रकाश रक्षा आन्दोलन में सन् १९४६ में स्यालकोट में इस पुस्तक को पढ़ा था। मित्रो! अब गिनती-मिनती आप कर लीजिये कि यह घटना कितनी पुरानी है। स्वामी जी के निधन पर उनकी संक्षिप्त जीवनी में एक विद्वान् ने यह घटना दी थी।

प्यारे प्रेमी मित्रो! आपने तो इतने निष्ठावान् धर्म सेवक, ऋषि भक्त की ६६ वर्ष की कमाई पर भी पानी फेर दिया। इससे उदयपुरियों को मिला क्या? रामपाल सिंह जैसे सतगुरुओं को आर्यसमाज पर वार करने के लिये एक हथियार इन्होंने दे दिया। अब भी भूल का सुधार कर सकते हो। जब चेते तभी सवेरा। परोपकारिणी सभा ने तो सुयोग्य विद्वानों को सत्यार्थप्रकाश के दोष रहित मुद्रण का कार्य सौंप ही दिया है। आप तो बन्दूकधारियों को आगे करके दूसरों को डराना-धमकाना चाहते हो। म. नारायण स्वामी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द के नाम लेवा बन्दूकों से डरने वाले नहीं। अरे मित्रो! सुनो-

लेखराम की सेना को न जालिम मौत डराती है

ऋषि जीवन में प्रदूषण-आर्य विद्वानों, लेखकों व गवेषकों को बड़ी सावधानी से आर्यसाहित्य व इतिहास के शुद्ध मुद्रण पर ध्यान देना चाहिये। आर्यसमाज नयाबांस विशेष रूप से ला. दीपचन्द आर्य जी ने पं. लेखराम रचित ऋषि जीवन का अनुवाद व प्रकाशन करके भारी उपकार किया। सुयोग्य अनुवादक जी ने सावधानी नहीं बरती और न अन्य जानकारों से सम्पर्क करके लाभ उठाया। परिणाम यह है कि ग्रन्थ में नई-नई भूलें घुसेड़ कर इतिहास प्रदूषण कर दिया गया है। भूल तो हम सभी अल्पज्ञ जीव कर सकते हैं, परन्तु महाभयङ्कर भूल घड़कर ग्रन्थ में घुसेड़ देना बुद्धिमत्ता नहीं है।

इस ग्रन्थ के सन् २००७ के संस्करण में पृष्ठ ४८७ पर छपा है-"ज्वाइण्ट मैजिस्ट्रेट तथा पादरी स्काट साहब भी एक या दो बार पधारे और सभा के आरम्भ से अन्त तक विराजमान रहे।" पादरी स्काट फर्रुखाबाद कहाँ आ गया? अनुवादक जी ने पं. लेखराम जी के दोष खोजने वालों की तो सेवा कर दी, परन्तु पं. लेखराम जी के शुद्ध सत्य लेख को तोड़-मरोड़ कर इतिहास बिगाड़ दिया। ज्वाइण्ट मैजिस्ट्रेट तो डोनिस्टन थे और स्काट वहाँ के जिला मैजिस्ट्रेट थे। पं. लेखराम जी के मूल ग्रन्थ को उठाकर देखिये। सच अपने

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आप बोलेगा। लेखक व अनुवादक के पश्चात् प्रकाशक व सम्पादक जी यदि ठीक समझें तो.....।

ऋषि उद्यान का निमन्त्रण और आपकी जठराग्नि– इससे पहले भी यह विनती की जा चुकी है और अब फिर आबाल वृद्ध को ऋषि उद्यान का निमन्त्रण दिया जाता है कि वैदिक सिद्धान्तों के ज्ञान, शंका समाधान, ऋषिकृत ग्रन्थों के अध्ययन, संस्कृत के कार्यसाधक अथवा गम्भीर अध्ययन, अरबी, उर्दू सीखने के लिए अल्पकाल या लम्बे समय के लिये ऋषि उद्यान आते रहिये। परोपकारिणी सभा ने अपने वार्षिक अधिवेशन में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया है कि इस कार्य के लिये सभा सब प्रकार की निःशुल्क व्यवस्था करती रहेगी। जिन युवकों में और बड़ी आयु के आर्य पुरुषों में धर्म-प्रचार के लिये, ऋषि मिशन के लिये तथा ज्ञान प्राप्ति के लिये जठराग्नि है, जिनके हृदय में पं. लेखराम की ज्वाला सुलग रही है, वे एक मास, दो मास के लिये समय निकाल कर आते रहें। दूर-दूर से भावनाशील युवक इस उद्देश्य से वहाँ आते रहते हैं। इसे एक आन्दोलन का रूप दीजिये।

ऋषि उद्यान में गुरुकुल तो चल ही रहा है। स्वामी स्वतन्त्रानन्द पीठ विद्वानों, उपदेशकों और वक्ताओं के चुभते अभाव को दूर करेगी। अभी परतवाड़ा महाराष्ट्र से इन्जीनियरिंग का एक लग्नशील उत्साही आर्यवीर २५ दिन के लिये प्रशिक्षण लेने पहुँचा है। वह ग्रीष्म अवकाश में भी फिर आयेगा। आचार्य सत्यजित् जी, आचार्य सोमदेव जी, श्री धर्मवीर जी और श्री स्वामी विष्वङ् जी महाराज ऐसे मिशनरियों के निर्माण में पूरी शक्ति से लगे रहते हैं। आर्यजगत् के अन्य-अन्य अनुभवी विद्वानों के परामर्श से इन कक्षाओं के लिये एक पाठ्यक्रम बनाने का एक अच्छा सुझाव मिला है। प्रतिवर्ष पचास साठ मिशनरी तो कम से कम निकलने चाहियें, तभी सांस्कृतिक आक्रमणों तथा अंधविश्वास से टक्कर ली जा सकती है। थोड़ी-थोड़ी उर्दू तो हमारे कई व्यक्तियों ने सीख ली है, परन्तु अभी कुल्लियात आर्य मुसाफिर, पं. चमूपति तथा स्वामी दर्शनानन्द जी की उर्दू समझने योग्य कोई तैयार नहीं हो सका। उर्दू लिखने वाला तो मेरे पीछे आर्यसमाज में कोई दिख ही नहीं रहा। –**वेद सदन, अबोहर।**

ई-मेल द्वारा परोपकारी निःशुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही निःशुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अतः पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह निःशुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल- psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

महर्षि दयानन्द सरस्वती–पुनर्जागरण के युगपुरुष

–रामकुमार गोयल

भारत में बहुत से प्रसिद्ध व्यक्तियों, जिन्होंने अपने–अपने क्षेत्रों में अद्वितीय कार्य किया है, ने जन्म लिया है। भारत के इन महान् पुरुषों ने बहुत सी बुराइयों के विरुद्ध अपनी आवाज उठायी और अपने साहस, दृढ़–निश्चय और भागीरथ प्रयत्न के बलबूते पर सफलता की चोटी को छुआ। उनका जीवन समस्त भारतीयों के लिये प्रेरणा का स्रोत है तथा करोड़ों भारतीयों व विश्व के करोड़ों लोगों को प्रेरणा देता रहेगा।

पुनर्जागरण के युगपुरुष–महर्षि दयानन्द सरस्वती

भारत के इतिहास में सामाजिक–धार्मिक सुधारों के क्षेत्र में प्रमुख सुधारकों में से एक हैं। वे **आर्यसमाज के संस्थापक** थे और उन्होंने ऐसे समय में, जब भारतीय समाज में जातिवाद व्यापक रूप से फैला हुआ था, वेदों की अतिसरल व्याख्या की तथा उन्हें जन–जन तक पहुंचाया। महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन तथा मिशन १९वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में **राष्ट्रीय हिन्दुत्व सुधार आंदोलन** का शानदार अध्याय है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का मूल नाम मूलशंकर तिवारी था। उनका जन्म गुजरात के टंकारा गांव में सन् १८२४ में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे एक सम्पन्न परिवार से थे और उनका प्रारंभिक जीवन बड़ी सम्पन्नता में गुजरा। उनके पिताजी ने उन्हें पांच वर्ष की आयु से ही संस्कृत, वेदों तथा अन्य धार्मिक पुस्तकों की शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया था। महर्षि दयानन्द के जीवन में बहुत सी ऐसी घटनाएं घटीं, जिन्होंने हिन्दू–धर्म के पारम्परिक विश्वासों पर प्रश्न चिह्न लगा दिये और वे बचपन के प्रारम्भिक काल से ही भगवान् की खोज में जुट गये। इतिहास से प्राप्त जानकारी के अनुसार यह उल्लेखनीय है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मात्र १४ वर्ष की आयु में ही मूर्ति–पूजा के विरुद्ध बिगुल बजा दिया।

उन्हें आभास हो गया था कि उनके माता–पिता उन्हें शादी के बन्धन में बांधने की फिराक में हैं। उन्होंने फैसला लिया कि शादी उनके लिये नहीं है और वे सरस्वती अखाड़े के घुमंतु साधु बन गये। वे ईश्वर की खोज में साधु के रूप में जंगलों, हिमालय की कन्दराओं तथा उत्तर भारत के तीर्थ स्थलों पर लगभग दो दशक तक भटकते रहे। जीवन के इस चरण में जब वे आध्यात्मिक मुक्ति की तलाश कर रहे थे, उन्हें गुरु व विश्वसनीय परामर्शदाता के रूप में स्वामी विरजानन्द सरस्वती मिले और महर्षि दयानन्द ने अढ़ाई वर्षों तक शिष्य के रूप में उनकी सेवा की। यह उनके जीवन का एक ऐसा मोड़ था, जहां से वे निजी आध्यात्मिक अन्वेषक से सार्वजनिक धर्म–प्रचारक में परिवर्तित हो गये। स्वामी विरजानन्द ने उन्हें गुरु दक्षिणा के रूप में वेदों का ज्ञान फैलाने को कहा। सन् १८६७ व १८७२ के बीच का समय महर्षि दयानन्द द्वारा हिन्दू–धर्म को सुधारने की दिशा में किये गये प्रयासों के लिये उल्लेखनीय है। इस काल के दौरान उन्होंने वेदानुकूल विचारधारा का उद्भव तथा विकास किया। आठवीं शताब्दी में आदि शंकराचार्य की भांति महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी काशी में बहुत से पण्डितों को चुनौती दी तथा वेदों व अन्य हिन्दू धर्म–ग्रन्थों पर वाद–विवाद एवम् तर्क–वितर्क के लिये न्यौता दे डाला।

उनके जीवन का १८७२ से १८७५ का अगला चरण भारत के इतिहास में अत्यधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। इस दौरान महर्षि दयानन्द कोलकाता के हिन्दू समाज के ठेकेदारों के व्यक्तिगत सम्पर्क में आये। दयानन्द के उपदेशों का उन पर कोई असर नहीं पड़ा, किन्तु स्वयं के ऊपर काफी असर पड़ा और उन्होंने अपनी जीवनशैली परिवर्तित कर दी। उन्होंने ब्रह्मसमाज के नेता केशवचन्द्र सेन की दो ठोस सलाहों को तुरन्त स्वीकार कर लिया। पहली सलाह पूरे वस्त्र पहनने सम्बन्धी थी और दूसरी ये कि वे जनता में संस्कृत की बजाय हिन्दी में भाषण देंगे।

उन्होंने विशुद्ध वैदिक–धर्म की स्थापना के लिये अपने विचारों का प्रचार करना शुरु कर दिया। उनका उद्देश्य था कि वेदों की आध्यात्मिकता का प्रचार किया जाये, जिसमें वे पारंगत थे। कोलकाता तथा अन्य जगहों पर उन्होंने रूढ़िवादी हिन्दू धर्म के तथाकथित पण्डितों व ईसाई मिशनरियों से शास्त्रार्थ किया। अपने कोलकाता प्रवास के दौरान महर्षि दयानन्द ने सार्वजनिक संभाषणों तथा प्रकाशनों के महत्व को जाना।

समाज सेवा के उद्देश्य से महर्षि दयानन्द ने सन् १८७५ में मुम्बई में **आर्यसमाज** की स्थापना की तथा कर्म के सिद्धान्त का समर्थन किया। आर्यसमाज समवेत स्वर में मूर्ति–पूजा, पशु–बलि, पितृ–पूजा, तीर्थ–यात्रा, पण्डिताई, मन्दिरों में चढ़ाए जाने वाले चढ़ावे, जातिवाद, अस्पृश्यता,

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

बाल-विवाह तथा महिलाओं के प्रति भेदभाव का जमकर विरोध करता है, क्योंकि वैदिक-धर्म में इनके लिये कोई जगह नहीं है। उन्होंने इस बात की जमकर वकालत की कि महिलाओं की शादी की उम्र १६ से २४ वर्ष तथा पुरुषों की शादी की उम्र २५ से ४० वर्ष के बीच होनी चाहिये। उनका दृढ़ विश्वास था कि भारतवर्ष के पतन के मुख्य कारण महिलाओं को शिक्षा से वंचित रखना तथा पर्दा-प्रथा है। स्वामी दयानन्द सरस्वती अध्यात्म के क्षेत्र के पहले धर्मगुरु थे, जिन्होंने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की उन्नति का स्वागत किया।

जब महर्षि दयानन्द ने अपने विचारों के प्रचार-प्रसार के लिये आर्यसमाज की नींव रखी तो उनके प्रचार में मुख्य नारा था-''वापस वेदों की ओर जाओ।'' इस तरह से वे स्वामी रामकृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानन्द दोनों से अलग थे। उदाहरण के तौर पर स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कहा था कि सच्चाई वेदों में नहीं है और व्यक्ति को तन्त्र के मुताबिक काम करना चाहिये। महर्षि दयानन्द सरस्वती का दृष्टिकोण अधिक सिद्धान्तपरक था। उन्होंने यह स्वीकार किया कि हिन्दू-दर्शन में वैदिक-सत्ता के सिद्धान्त के बारे में भ्रामक स्थिति है।

स्वामी दयानन्द के जीवन का अन्तिम चरण सन् १८७६ से १८८३ के बीच का है। इस काल के दौरान अविभाजित पंजाब में आर्यसमाज का व्यापक प्रचार हुआ। पंजाब केसरी लाला लाजपत राय आर्यसमाज की विचार-धारा से काफी प्रभावित थे और वे आर्यसमाज के कट्टर समर्थक बन गये।

हम इस बात से तो वाकिफ हैं कि स्वामी विवेकानन्द ने १८९३ में शिकागो में हुए **विश्व धर्म संसद** में भाग लिया था, किन्तु इस बात को कम ही लोग जानते हैं कि नई दिल्ली में भारत के वायसराय लॉर्ड लिट्टन ने एक जनवरी १८७७ को **दिल्ली दरबार** में सभी धर्मों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया था, जिसमें महर्षि दयानन्द ने भी भाग लिया था।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने देशवासियों से अनुरोध किया कि वेदों के सर्वानुकूल दृष्टिकोण को हमेशा ध्यान में रखें। उन्होंने कहा कि स्मृति तथा पुराणों ने लोगों को गुमराह किया है और अस्पृश्यता व नारी-शोषण जैसी कुप्रथाओं के मार्ग पर धकेल दिया। उन्होंने सभी जातियों के लिये वेदों के अध्ययन के लिए एक पाठशाला खोली। यह प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली **गुरुकुल परम्परा** को पुनर्जीवित करने की दिशा में एक ठोस कदम था, जहां विभिन्न रुचियों के विभिन्न वर्गों से आये छात्र बिना जाति व वर्ग-भेदभाव के एक ही गुरु से इकट्ठे शिक्षा ग्रहण करते थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कुल मिलाकर ६० से अधिक पुस्तकें लिखीं, जिनमें छ: **वेदांगों** की व्याख्या के चौदह ग्रन्थ भी शामिल हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने नीति व नैतिकता, वैदिक-कर्मकाण्ड तथा धर्म-विधि और विरोधाभासी सिद्धान्तों पर आलोचनाओं से सम्बन्धित पुस्तकें भी लिखीं। उनके प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार-विधि, आर्योद्देश्यरत्नमाला, वेदभाष्य आदि हैं। परोपकारिणी सभा की स्थापना स्वयं महर्षि जी ने की थी। इस सभा का उद्देश्य उनकी कृतियों तथा वैदिक-सिद्धान्तों का प्रकाशन व प्रचार करना है।

महर्षि दयानन्द की क्रांतिकारी एवं मौलिक विचार-धारा के कारण उनके अनेक शत्रु बन गये। वे अपनी निर्भयता व स्पष्टवादिता के लिये विख्यात थे। वे बिना किसी डर या पक्षपात् के सत्य बोलते थे और इस प्रक्रिया में बहुत से प्रभावशाली धार्मिक नेता उनसे नाराज रहने लगे। ऐसा कहा जाता है कि जब उनकी स्पष्टवादिता असह्य हो गई, तो कुछ लोगों ने उनके रसोइये जगन्नाथ को उन्हें खाने में जहर मिलाकर खिलाने के लिये रिश्वत दी। कुछ समय बाद महर्षि दयानन्द गम्भीर रूप से बीमार हो गये। डॉक्टरों ने निष्कर्ष निकाला कि इस महान् धर्मगुरु को जहर दिया गया है और उनके स्वस्थ होने की कोई उम्मीद नहीं है। जब महर्षि दयानन्द को पता चला तो उन्होंने जगन्नाथ को बुलाया तथा उसे कुछ धन देकर कहा, ''नेपाल भाग जाओ। तुरन्त भाग जाओ, अभी समय है। यदि मेरे शिष्यों को मालूम हुआ कि क्या घटित हुआ है, तो वे तुम्हें जान से मार डालेंगे।'' तीस अक्टूबर १८८३ की रात को उनका देहान्त हो गया। उन्होंने ओ३म् का उच्चारण करते हुए अन्तिम सांस ली।

सुकरात की तरह महर्षि दयानन्द सरस्वती को भी लोगों ने विषपान करा दिया, क्योंकि वे उन कड़वी सच्चाइयों, जो वे निडर व निष्पक्ष होकर बोलते थे, को नहीं पचा पाते थे। सफल सांसारिक जीवन जीना तथा अच्छे उद्देश्य के लिये कर्म करना महत्वपूर्ण है। महर्षि दयानन्द एक महान् देशभक्त थे। उन्होंने सभी भारतीयों का आह्वान किया तथा उन्हें अपनी कायरता व झिझक त्याग देने का संदेश दिया। उनकी राय थी कि भारत को ब्रिटिश शासकों के दमन से मुक्त कराने तथा देश को स्वतन्त्र कराने के लिये संघर्ष जरूरी है। वे ''**आधुनिक भारत के निर्माताओं**'' में से एक थे। वे

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने ''**स्वराज्य भारत भारतवासियों के लिये**'' का नारा बुलंद किया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के बारे में चर्चा करते हुये श्री अरविंदो ने कहा था–''**वैदिक व्याख्या के मामले में अन्तिम व सम्पूर्ण व्याख्या कुछ भी हो, मुझे विश्वास है कि दयानन्द को तथ्यों के प्रथम अन्वेषक के रूप में सम्मान दिया जायेगा।**''

–सूर्य टावर्स, चौथी मंजिल, १०५,
सरदार पटेल मार्ग, सिकन्दराबाद, आन्ध्रप्रदेश।
दूरभाष: ०४०-२७८४३५८२

कृपया ''परोपकारी'' पाक्षिक शुल्क, अन्य दान व वैदिक-पुस्तकालय के भुगतान इलेक्ट्रोनिक मनीऑर्डर से ना भेजें

निवेदन है कि ई.एम.ओ. द्वारा ''परोपकारी'' शुल्क, अन्य दान व वैदिक पुस्तकालय के पुस्तकों के भुगतान भेजने का कष्ट न करें, क्योंकि इस फार्म में न तो ग्राहक संख्या का उल्लेख होता है और न ही पैसे भेजने के उद्देश्य का। सभा कर्मचारी उचित खाता शीर्ष में राशि नहीं जमा कर पाते हैं क्योंकि पैसे भिजवाने का उद्देश्य ज्ञात नहीं हो पाता है। इस मनीऑर्डर फार्म में संदेश का स्थान रिक्त रहता है। कृपया साधारण एम.ओ. द्वारा ही राशि भिजवाने का कष्ट करें तथा फार्म में संलग्न समाचार वाली स्लिप पर ग्राहक संख्या, दान सम्बन्धी सूचना व पुस्तकों के विवरण का अवश्य उल्लेख करें। **यदि ई.एम.ओ. से भेजना है तो संपूर्ण स्पष्ट विवरण लिखा पत्र भी अलग से अवश्य प्रेषित करें। –व्यवस्थापक**

कम अवधि का व्यायाम

एक अध्ययन से पता चला है कि कम अवधि का व्यायाम लम्बी अवधि के व्यायाम से ज्यादा लाभप्रद होता है। शोध में पता चला कि अधिक वजन वाले जिन लोगों ने रोज आधा घंटा व्यायाम किया उनका वजन तीन माह में ८ पाउण्ड तक कम हुआ, जबकि इससे दोगुना अर्थात् एक घंटा तक व्यायाम करने वाले लोगों का वजन ६ पाउण्ड तक ही कम हुआ। कोपनहेगन युनिवर्सिटी के शोधकर्ता मैड्स रोजनकिल्डे की टीम ने बताया कि अभी यह पता नहीं चला है कि ज्यादा देर व्यायाम करने वालों का वजन धीमी रफ्तार से कम क्यों होता है, शायद इसलिए कि वे लम्बे व्यायाम के बाद थक जाते हैं और ज्यादा खा लेते हैं, जबकि ३० मिनट तक व्यायाम करने वालों में काफी ऊर्जा शेष रहती है, जिससे वे रोज का काम आराम से कर लेते हैं। **–सौजन्य : राष्ट्रदूत-१३.०९.२०१२**

निद्रा का स्मरण शक्ति पर प्रभाव

एक नए शोध से पता चला है कि रात में अच्छी तरह सोने पर सुबह बच्चे ज्यादा अच्छी तरह नए शब्द सीख जाते हैं। शोध से पता चला है कि तेज दिमाग वाले बच्चे भी अगर रात में अच्छी तरह से सोते हैं, तब ही सुबह अच्छी तरह नए शब्द सीख पाते हैं। बच्चों को बेहतर तरीके से संवाद की प्रक्रिया सिखाने के लिए उन्हें नए शब्द व उनका प्रयोग सिखाना काफी महत्वपूर्ण है, पर इस हालिया खोज से पता चला है कि अच्छी नींद से याददाश्त तेज होती है, जिससे बच्चे जल्दी सीख पाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि कई बच्चे सुबह जो शब्द सीखते हैं, उसको आधे शाम तक भूल जाते हैं, पर याददाश्त की यह कमजोरी अल्पकालिक ही थी। क्योंकि जब ये बच्चे रात में अच्छी तरह सोए तो सुबह उन्होंने अच्छी तरह नये शब्द सीखे और उन्हें भूले भी नहीं। यह शोध यॉर्क एवं शेफील्ड हैल्लम युनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने किया है।

–सौजन्य : राष्ट्रदूत-१६.१२.२०१२

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

परोपकारी पत्रिका के नये आजीवन सदस्य

(दिनांक १ जुलाई से १५ दिसम्बर २०१२ तक)

१. डॉ. प्रहलाद ठक्कर, अहमदाबाद, २. देवानन्द आर्य, बलांगीर, औड़िसा, ३. गोकरुणानन्द बाबा, बस्तर, छत्तीसगढ़, ४. नरोत्तम प्रधान, बलांगीर, ओड़िसा, ५. राजेश कुमार आर्य, नवादा, बिहार, ६. कुशलपाल राणा, हरियाणा, ७. चौधरी रणवीर सिंह आर्य, पानीपत, ८. यज्ञदत्त आर्य, यमुनानगर, हरियाणा, ९. डॉ. विवेक चड्ढा, यमुनानगर, हरियाणा, १०. सुनील आर्य, गुड़गांव, ११. आचार्या सन्तोष कुमारी आर्य, ज्वालापुर, उत्तराखण्ड, १२. ओमप्रकाश, हरिद्वार, १३. मुन्नालाल बामनिया, जोधपुर, १४. आर्यसमाज बदरेखा, बागपत, १५. उमाशंकर, दीपक कुमार चौरसिया, विदिशा, म.प्र., १६. विनोद जायसवाल, हावड़ा, पश्चिम बंगाल, १७. अम्बुस्गे, सचिव तुलजा भवानी सार्वजनिक वाचनालय, लातूर, महाराष्ट्र, १८. आर्यसमाज पिंजोर, पंचकूला, १९. योगेन्द्र चौहान, गुड़गांव, २०. के.सी.गुप्ता साहेब, गाजियाबाद, २१. नवीन कुमार रस्तोगी, मुरादाबाद, २२. अजय वर्मा, छिन्दवाड़ा, म.प्र., २३. सुजेश आर्य, छिन्दवाड़ा, म.प्र., २४. हंसमुनि योगार्थी/हंसराज सरपंच, नारनौल, हरियाणा, २५. ललित आर्य, बुलन्दशहर, उ.प्र., २६. डॉ. प्रहलाद सिंह पीह, अजमेर, २७. डॉ. कृष्ण मोहन बरनवाल, वाराणसी, २८. अनिल गुप्ता, दिल्ली, २९. उधमसिंह आर्य, हरिद्वार, ३०. मनोज कुमार आर्य, हरिद्वार, ३१. रामकिशन व मुकेश कुमार चौरसिया, विदिशा, ३२. बालेश्वर मुनि, अजमेर, ३३. अनिल कुमार वर्मा, अजमेर, ३४. श्याम भाई (श्याम सुन्दर भारद्वाज) अजमेर, ३५. किस्तुर चन्द जैन, नागौर, ३६. ऋषभ कॉटन इन्डस्ट्रीज, नागौर, ३७. खेमाराम सेठ, मकराणा, नागौर, ३८. लक्ष्मण लाल, नागौर, ३९. अमराराम अकोदिया, नागौर, ४०. जगदीश बंशीवाल, नागौर, ४१. बेंगोपाल मंत्री, नागौर, ४२. पांचुलाल, बिदियाद, नागौर, ४३. श्रवणराम गोटिया, परबतसर, नागौर, ४४. रामनिवास गोटिया, परबतसर, नागौर, ४५. अप्पाराम, मकराणा, नागौर, ४६. अनुपम आर्य, नई दिल्ली, ४७. अमित महेश्वरी व सुमन महेश्वरी, गोरेगाँव, मुम्बई, ४८. महावीर सिंह, ग्वालियर, ४९. राजेश गुप्त, हापुड़, ५०. राजेश आर्य, सवाईमाधोपुर, ५१. राजेश आर्य, सवाईमाधोपुर, ५२. ईश्वर प्रसाद छीपी आर्य, सवाईसमाधोपुर, ५३. राजेन्द्रसिंह, नई दिल्ली, ५४. सन्तोष मदान, नई दिल्ली, ५५. पल्लवी आमटे, मुम्बई, ५६. मोहित चौधरी, अजमेर, ५७. रामसेवक आर्य, कानपुर, ५८. आर्यसमाज वेद मन्दिर, कानपुर, ५९. उषा मोहन्ता, चण्डीगढ़, ६०. मुकेश आर्य, रोहतक, ६१. आर्यसमाज रोहतक, ६२. बलराज आर्य, रोहतक, ६३. देवेन्द्र, रोहतक, ६४. रश्मी सिहाग, हनुमानगढ़, ६५. सत्यकाम आर्य, सहारनपुर, ६६. सुन्दरलाल, सहारनपुर, ६७. विकास आर्य, सहारनपुर, ६८. जे.पी. नारवाल, रोहतक, ६९. तृप्ती आशुतोष पारीक, अजमेर, ७०. पदमकुमार लुधियाना, ७१. सी.पी. शर्मा शास्त्री, देहरादून, ७२. बाबूलाल झंवर, सिहोर, म.प्र., ७३. सुरेन्द्रनाथ धीर, नई दिल्ली, ७४. रमेश मित्तल, उदयपुर, ७५. शालिनी भाटिया, गाजियाबाद, ७६. सिद्धार्थ खन्ना (स्नेहलता) नई मुम्बई, ७७. चन्दनमल भार्गव, जैसलमेर, ७८. विनय कुमार झा, जयपुर, ७९. ब्रह्मचारी राजबीर आर्य, झज्जर, हरियाणा, ८०. खेताराम, डेगाना, नागौर, ८१. शिवनारायण चौधरी, नागौर, ८२. मनोज कुमार मिश्र, लखनऊ, ८३. प्रदीप कुमार, फैजाबाद, ८४. प्रेमशंकर मार्या, लखनऊ, ८५. आर.डी. आर्य, लखनऊ, ८६. डॉ. भानूप्रकाश आर्य, लखनऊ, ८७. अजयकुमार श्रीवास्तव, लखनऊ, ८८. स्नेहलता मेहता, लखनऊ, ८९. अजयकुमार श्रीवास्तव, सूरत, ९०. सीतादेवी ओसवाल, उज्जैन, ९१. आर्य गौरव सिंह, गुड़गांव, ९२. रामकिशोर कासदे, भोपाल, ९३. शिवशंकर लाल वेश्य, लखनऊ, ९४. डॉ. तारा सिंह आर्य, महाराष्ट्र, ९५. वेदपाल आर्य, जिन्द, हरियाणा, ९६. हेमन्त अरोड़ा, रुड़की, ९७. ओम प्रकाश शास्त्री, मेरठ, ९८. रामा आर्य, महेन्द्रगढ़, हरियाणा, ९९. वशिष्ठ मुनि, दिल्ली, १००. स्वामी कृष्णानन्द, चौमू, जयपुर, १०१. मोहनलाल माना शर्मा, इन्दौर, १०२. जसवन्त लाल नानजी भाई पटेल, गुजरात, १०३. सीताराम गुप्ता, मेरठ, १०४. सत्यदेव, मुजफ्फर नगर, उ.प्र., १०५. नरेन्द्र कुमार आर्य, नागौर, १०६. प्रेमसिंह, पाटन, गुजरात, १०७. शिराज द्वारा ओम मेन्स वीयर, पूणे, १०८. चेतन पंवार, अजमेर, १०९. डॉ. गंगा शरण आर्य, नई दिल्ली, ११०. प्रवीण मिश्र, जयपुर, १११. संदीप कुमार आर्य, कैथल, हरियाणा, ११२. रामकिशोर आर्य, जयपुर, ११३. मन्त्री आर्यसमाज, मुरैना, म.प्र., ११४. रामदेव सैनात्री, हैदराबाद, ११५. आचार्या सुनिति, मेडक, आ.प्र., ११६. वेदपाल आर्य, झज्जर, ११७. कैलाश चन्द्र महावीर, अजमेर, ११८. अक्षय अवस्थी द्वारा आनन्दप्रिया अवस्थी, ओरया, ११९. रामचन्द गुप्ता, सीतापुर, १२०. चेतन पाराशर, अजमेर, १२१. रामनिवास, महेन्द्रगढ़, हरियाणा, १२२. सत्यपाल आर्य, नई दिल्ली, १२३. भरत भाई अग्रवाल।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

जिज्ञासा समाधान-४१, पृष्ठ-११ का शेष.....

है कि नियोग में किस स्त्री या पुरुष का सहयोग लेकर यह सन्तान प्राप्त की गई है, तदनुरूप व्यवस्था चलती रहेगी।

३. तृतीय प्रश्न भी यह मानकर किया गया है कि पुनर्विवाह की अनुमति नहीं है। प्रथम प्रश्न के समाधान में किये स्पष्टीकरण को यहां भी लेना चाहिए। आज कल जिन व जैसे विधुर-विधवाओं के परस्पर इच्छा-सहमति पूर्वक पुनर्विवाह होते हैं, उनके पुनर्विवाह का निषेध वेद व महर्षि द्वारा नहीं समझना चाहिए। ऐसों के पुनर्विवाह की अनुमति समझनी चाहिए।

इसी प्रश्न में दूसरा आक्षेप ब्रह्मचर्य व समाज-व्यवस्था की रक्षा के नाम पर फजीती करने का है। इसका उत्तर यह है कि नियोग से ब्रह्मचर्य व समाज-व्यवस्था की फजीती उन्हें प्रतीत होती है, जिन्होंने ब्रह्मचर्य व समाज-व्यवस्था की प्रचलित मान्यता को आदर्श मान लिया है। यह नियोग मात्र विषय-भोग के लिए नहीं है, उन्मुक्त-स्वच्छन्द-उच्छृंखल नहीं है। महर्षि ने स्पष्ट लिखा है कि यह सीमित है, नियमबद्ध है। यह नियोग भद्र पुरुषों की अनुमति व स्त्री-पुरुष की प्रसन्नता से किया जाता है, इसमें लुका-छिपी नहीं होती, यह गुप-चुप नहीं होता, अतः सामाजिक रूप से विवाह के समान स्वीकार्य व आदर के योग्य होता है। वैदिक धर्म व मान्यताओं का ह्रास होने से मध्यकाल में एक पति व एक पत्नीव्रत की वैदिक मान्यता की गलत व्याख्या प्रचालित हो गई कि एक पुरुष या एक स्त्री को जीवन में एक ही स्त्री या पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध रखना है। यह बात विवाहित स्त्री-पुरुषों पर सामान्यतः व्यापक रूप से लागू होती है, होनी चाहिए, किन्तु आपत्काल में परिस्थिति विशेष में नियोग को स्वीकृति देकर वैदिक धर्म ने मानवीयता का परिचय दिया है, मानवीयता को बनाये रखा है।

वैदिक धर्म ने प्रत्येक मानव के लिए सभी परिस्थितियों में न्याययुक्त उचित व्यवस्था दी है। एक पति-पत्नी व्रत के प्रचलित तथाकथित आदर्श को माना जाए, तो वहां आपत्काल में ऐसे मानवों के प्रति अनुचित कठोर व कष्टप्रद व्यवस्था थोप दी जायेगी। यह अमानवीयता होगी। ऐसे में व्यभिचार-गर्भपातादि दोष अधिक होंगे। क्या ऐसी अमानवीय सामाजिक-व्यवस्था की रक्षा के लिये नियोग की निंदा की जाये? ऐसे स्त्री-पुरुषों के लिए कोई न कोई व्यवस्था तो होनी ही चाहिए, यह मानवीयता होगी, और उस व्यवस्था में नियोग को भी स्थान देना ही होगा। प्रबुद्ध व्यक्ति व मानवीय हृदय रखने वाला व्यक्ति नियोग को सहज ही स्वीकार कर लेगा। नियोग व्यवस्था को देकर वेद व महर्षि ने ऐसी परिस्थिति वाले लोगों के प्रति न्याय, आत्मीयता व सम्मान प्रकट किया है।

जिन्हें नियोग में ब्रह्मचर्य की फजीती लगती हैं, उन्हें यह भी विचार करना चाहिए कि महर्षि के अनुसार विवाहितों को भी मात्र सन्तानोत्पत्ति के लिए ही शारीरिक सम्बन्ध बनाने का विधान है। विवाहितों द्वारा इस विधान का उल्लंघन करने में ब्रह्मचर्य की फजीती नहीं है क्या? महर्षि द्वारा समर्थित संयमयुक्त व नियमबद्ध नियोग और आज के अधिकांश विवाहितों के परस्पर शारीरिक सम्बन्धों की तुलना करें, तो किसमें ब्रह्मचर्य की फजीती है? यह निर्णय सरलता से लिया जा सकता है। सत्यार्थप्रकाश चतुर्थसमुल्लास में महर्षि ने स्पष्ट लिखा है-''विवाह व नियोग सन्तानों ही के अर्थ किये जाते हैं, पशुवत् काम-क्रीड़ा के लिए नहीं''। आर्योद्देश्यरत्नमाला में 'व्यभिचार त्याग' वर्णन भी इसकी पुष्टि करता है।

४. चतुर्थ प्रश्न में नियोग के समान नियुक्त होकर यानि प्रकट रूप से वैश्या के यहां जाने में भी व्यभिचार न मानने की बात आक्षेप-निंदा रूप में लिखी गई है। इसका समाधान यह है कि 'नियुक्त=प्रकट रूप में होना' मात्र यही नियोग के व्यभिचार न मानने में कारण नहीं है। विवाह के समान नियोग का शास्त्रोक्त होना व भद्र पुरुषों की अनुमति भी इसमें कारण हैं। वैश्या के पास जाना शास्त्रोक्त न होने से व्यभिचार ही कहलायेगा, भले ही प्रकट रूप में हो। साथ ही यह बात अवश्य ध्यान रखनी चाहिए कि नियोग मात्र विषय-भोग के लिए नहीं है, सन्तानोत्पत्ति भी वहां लक्ष्य है, तथा यह आपत्काल में नियमपूर्वक किया जाता है। वैश्या के पास जाना मात्र विषय-भोग के लिए होता है, वहां सन्तानोत्पत्ति का उद्देश्य नहीं होता, यह नियमपूर्वक भी नहीं होता, उसमें उच्छृंखलता व स्वच्छन्दता होती है। अतः वैश्या के पास जाने को तो व्यभिचार ही माना जायेगा व इसकी तुलना नियोग से नहीं करनी चाहिए।

५. पांचवें प्रश्न में नियोग की अपेक्षा पुनर्विवाह को ठीक माना है, और नियोग से अच्छा उपाय होने के कारण आर्यसमाजी विद्वानों द्वारा उसका प्रचलन होने की बात लिखी गई है। इसका समाधान प्रश्न १ के समाधान में दिया जा चुका है। हो सकता है ऐसा भी हुआ हो, किन्तु इससे यह सिद्ध करने का प्रयास करना अनुचित होगा कि नियोग गलत है, और इसे सत्यार्थप्रकाश में से हटा देना चाहिए। महर्षि द्वारा पुनर्विवाह का निषेध कब-किनके लिए है, इसे

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

ठीक तरह समझना चाहिए। महर्षि द्वारा पुनर्विवाह का वैसा निषेध नहीं समझना चाहिए जैसा कि प्रश्न कर्त्ता ने समझ लिया है।

६. छठे प्रश्न में नियोग के बाद आगे सम्बन्ध न रहने पर प्रश्न उठाया गया है। इसका समाधान यह है कि नियोग का विधान द्विजों=वास्तविक द्विजों के लिए है, वे इतना संयम करने में समर्थ होने ही चाहिएं। हां, जो तथाकथित द्विज हैं, उनके लिए तो नियोग है ही नहीं। इस विषय में वैदिक गृहस्थ व्यवस्था व नियोग व्यवस्था का पूर्णत: पालन करने वाला व्यक्ति, जो मात्र सन्तानोत्पत्ति के लिए शारीरिक सम्बन्ध बनाता है, वह निश्चय ही योगी कहलाने योग्य है। वैदिक विवाह व नियोग व्यवस्था व्यक्ति को अन्तत: योगी बनाने के लिए ही है, यह उन्मुक्त-उच्छृंखल विषयभोग करने का सामाजिक प्रमाण पत्र देना नहीं है। जिन्हें नियोग के बाद संयम रखना संभव न लगे, वे नियोग न करें, यह उनकी स्वतंत्रता है। नियोग करना अनिवार्य नहीं बनाया गया है। महर्षि ने नियोग को विकल्प रूप में रखा है। प्रथम विकल्प तो ब्रह्मचर्य से रहने का ही लिखा है और कुल चलाने के लिए बच्चा गोद लेने का लिखा है।

७. सातवें प्रश्न में महाभारत से पूर्व के नियोग का उदाहरण पूछा गया है। रामायण के हनुमान् इसके उदाहरण हैं। इनकी माता का नाम 'अञ्जनी' था। अञ्जनी के विवाहित पति का नाम 'केसरी' था और नियोग करने वाले पुरुष का नाम 'पवन' था। हनुमान् को आञ्जनेय व पवनसुत नाम/विशेषणों से आज भी पुकारा जाता है।

महाभारत के उदाहरणों को भी आर्यों का पतनकाल मानकर नकारा नहीं जा सकता। यह भले ही पतनकाल हो, पर पूरा पतन नहीं हुआ था। पतनकाल में हाने वाली सारी बातें अस्वीकार्य नहीं हो जातीं। चूंकि नियोग वेदोक्त है, अत: महाभारत में नियोग के उदाहरणों को पतन के कारण होने वाला नहीं माना जा सकता। यदि वेद से नियोग की पुष्टि नहीं होती, वेद में नियोग का निषेध होता, तब महाभारत के नियोग के उदाहरणों को अस्वीकार करना उचित माना जा सकता था। वेद के प्रमाण के रहते महाभारत के इन उदाहरणों का दिया जाना उचित मानना चाहिए।

८. प्रश्न आठ में लिए नियोग विषयक वचन में तो प्रश्नकर्त्ता की दृष्टि से असंयम की सब सीमाएं लांघ दी गईं हैं। ब्रह्मचर्य, समाज-व्यवस्था, आदर्श, भारतीय संस्कृति, वैदिक धर्म सब चौपट कर दिया गया है।

यहां यह समझना आवश्यक है कि इस स्थिति को पति या पुरुष की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। इसे पत्नी या स्त्री की दृष्टि से देखना चाहिए। पत्नी के साथ भी आत्मवत् व्यवहार करना, उसकी आवश्यकताओं व भावनाओं का भी आदर-सम्मान रखना न्यायोचित है, धर्म है।

तथाकथित भारतीय संस्कृति व धर्म की आड़ में पुरुष/पति या समाज को यह क्यों भूलना चाहिए कि स्त्री भी एक मनुष्य है, एक स्वतन्त्र आत्मा उसमें भी है, उसका भी पुरुष के समान अधिकार है, वह भी समाज का अङ्ग है। क्या दूसरे की आवश्यकता व भावना का सम्मान करना, उसे स्वीकारना भारतीय संस्कृति व धर्म नहीं है? क्या यह उचित न्यायसंगत नहीं है? संस्कृति या धर्म के किसी नियम की व्याख्या करते समय या समझ बनाते समय यह स्मरण रखना चाहिए कि इससे संस्कृति या धर्म का दूसरा नियम उपेक्षित या खण्डित न होने पाये। यदि पतिव्रत की ऐसी व्याख्या से पत्नी के प्रति आत्मवत् व्यवहार खण्डित हो रहा हो, उसकी उचित आवश्यकता व भावना का अनादर हो रहा हो, तो ऐसी व्याख्या अनुचित व अन्याय होने से धर्म नहीं कही जा सकती। पुरुष प्रधान संस्कृति में आत्मकेन्द्रित पुरुष को नियोग के इस विधान से अपने कल्पित आदर्श व सम्मान की धज्जियां उड़ती दिखती हैं। उसे इसमें अपने अधिकार का हनन दिखता है, क्योंकि इससे उसे अपने तथाकथित आत्मसम्मान पर आघात लगता है, किन्तु उसे स्त्री के अधिकार की रक्षा का विचार नहीं आता। ऐसे पुरुषों या समाज के किसी तथाकथित आदर्श की दृष्टि से नियोग की आलोचना होना, नियोग को गलत बताना अनुचित है।

महर्षि ने तो सत्यार्थप्रकाश चतुर्थसमुल्लास में 'कुह स्विद्दोषा.....' ऋ. १०.४०.२० की व्याख्या में स्पष्ट लिखा है-"इससे यह सिद्ध हुआ कि देश-विदेश में स्त्री-पुरुष सङ्ग ही रहें"। सत्यार्थप्रकाश चतुर्थसमुल्लास में "**पानं दुर्जनसंसर्ग:**....." मनुस्मृति ८.१३ की व्याख्या में भी महर्षि लिखते हैं-"दूर देश में यात्रार्थ जावे तो स्त्री को भी साथ रक्खे"। यदि पुरुष अपने इस कर्त्तव्य का पालन करने में असमर्थ है, तो यह पति का दोष है, पत्नी का नहीं। ऐसे में इतने वर्ष बीतने पर भी पति न आये तो पत्नी को नियोग का अधिकार दिया गया है। क्या पुरुष प्रधान मानसिकता इतनी परिक्वता नहीं दिखा सकती कि मात्र अपनी (पुरुष की) न सोचकर पत्नी की भी सोच लेवे, उसकी भी सुध ले लेवे। ऐसी परिस्थिति में पत्नी के लिए नियोग का विधान अनुचित-अन्याय-अधर्म कैसे कहा जा सकता है? वैचारिक रूप से परिपक्व वैदिक धर्मी पति को विदेश से आकर अपनी ऐसी

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

नियोग की हुई पत्नी को पत्नी के रूप में स्वीकारने में कोई असहजता नहीं प्रतीत होगी, नहीं होनी चाहिए। तथाकथित प्रबुद्ध-धार्मिक पुरुषों को अपनी बौद्धिक परिपक्वता को इस स्तर पर लाना चाहिए। ऐसा नियोग उचित है, इसमें संकोच नहीं करना चाहिए, यह धर्म है।

वैदिक धर्मी द्विज पुरुष व स्त्री बौद्धिक स्तर पर कितने परिपक्व समझदार व सुलझे हुए होने चाहिएं, इसे सुनकर संस्कृति व धर्म के तथाकथित रक्षक पुरुष कांप जायेंगे। सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास में ''अन्यमिच्छस्व.....'' ऋ. १०.१०.१० की व्याख्या में महर्षि जो लिखते हैं उसमें असमर्थ पति अपनी पत्नी को अन्य विधुर पुरुष से नियोग की **आज्ञा** स्वयं देता है, इसी प्रकार असमर्थ पत्नी भी अपने पति को अन्य विधवा स्त्री से नियोग की **आज्ञा** देती है। अहो! कितना ऊंचा न्याय संगत व्यवहार है, कितना ऊंचा आत्मवत् व्यवहार है। अपने तथाकथित स्वाभिमान-सम्मान-अहंकार को अलग रखकर अपने पति या अपनी पत्नी को नियोग की आज्ञा देने की कल्पना तक करना मध्ययुगीन मानसिकता से युक्त स्त्री-पुरुषों के लिए असंभव है। पर सुलझे हुए वैदिक धर्मी स्त्री-पुरुष इसे व्यवहार में संभव करके, सहज जीवन जीते हैं।

महर्षि ने नियोग की व्यवस्था को द्विजों तक सीमित किया है, सब के लिए नियोग की व्यवस्था नहीं दी है। **नियोग को समझ पाना व स्वीकार कर पाना द्विजों के लिए ही संभव है।** महर्षि ने अद्विजों के स्तर को देखते हुए ही उन्हें नियोग से नहीं बांधा। महर्षि ने यथायोग्य विधान किया है। हां, यदि कोई अद्विज भी नियोग की समझ रखता है, तो उसके लिए नियोग का निषेध भी नहीं है। नियोग सोच समझकर योग्य व्यक्ति से किया जाता है, अन्यथा गुप-चुप में यथावसर यथालभ्य व्यक्ति से संपर्क होने में धोखाधड़ी-हानि-अपमान-निंदा-ग्लानि-अपराध बोध आदि अनेक भयंकर दोषों की संभावना-आशंका बनी रहती है।

९. नौवें प्रश्न में नियोग से समस्त सामाजिक ढांचे व विश्वास को ध्वस्त करने का आक्षेप किया गया है। परिवार की आधारशिला को ध्वस्त करने का आक्षेप किया गया है। वस्तुतः ऐसा नियोग (पति-पत्नी के जीवित रहते) पति-पत्नी की परस्पर सहमति से किया जाता है। इसमें पति या पत्नी द्वारा पत्नी या पति को आदेश दिये जाने की बात भी अन्तर्भावित समझनी चाहिए, जैसा कि प्रश्न ८ के समाधान में महर्षि के वचनों के प्रमाण पूर्वक लिखा गया है। इस प्रकार के नियोग को आवश्यक भी नहीं समझना चाहिए, यह ऐच्छिक है, और व्यभिचार आदि दोषों से बचने के लिए दी गई आपत्कालीन व्यवस्था है। यह व्यभिचारादि दोषों की अपेक्षा से कहा गया है।

प्रश्न ९ में उद्धृत महर्षि के वचन में एक अंश छूटा हुआ है, जो यहां गहरे अक्षर में दिया जा रहा है-''और गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के समय में पुरुष वा **दीर्घ रोगी पुरुष की** स्त्री से न रहा जाए तो किसी से नियोग करके उसके लिए पुत्रोत्पत्ति कर दें,.....''

१०. दसवें प्रश्न में पति के बड़े या छोटे भाई से नियोग को अनुचित बताया गया है, क्योंकि भाभी तो मां समान होती है। ऐसे नियोग को आर्यसमाज की नैया डुबाने वाला बताया है। इसका समाधान यह है कि नियोग परस्पर सहमति, प्रसन्नता व सूचनापूर्वक होता है, यदि कोई अपनी भाभी को मां के समान मानता है व नियोग के भाव नहीं रखता है, तो वह ऐसा नियोग न करे। नियोग अनिवार्य नहीं है। दूसरा यदि ऐसा नियोग होता है, तो यहां भी नियोग के नियम लागू होते हैं, यह व्यभिचार नहीं है।

प्रश्नकर्ता ने आज के परिवेश में देवर के साथ होने वाले विवाह का उदाहरण दिया है। वैदिक दृष्टि से तो यह उचित ही है, ऐसे विवाह का महर्षि द्वारा कहां निषेध किया गया? बहु के हाथ की मेहंदी न छूटने का अर्थ यदि पति से असंयोग है, तो उसका कुंवारे अविवाहित देवर से विवाह उचित है। यदि उसका पति से संयोग हो चुका था, तो अब उस कुंवारे देवर से विवाह का निषेध होना चाहिए। पर यह बात द्विजों पर ही लागू होगी। द्विजों में भी यदि बहू (भाभी) व देवर की परस्पर प्रसन्नतापूर्वक पूर्ण सहमति है, तो ऐसे विवाह को उचित माना जा सकता है। अद्विजों में तो ऐसा विवाह हो ही सकता है। क्षतवीर्य-विधुर देवर या जेठ से पुनर्विवाह में भी कोई दोष नहीं।

इस उदाहरण से प्रश्नकर्त्ता पर स्वयं आक्षेप आता है। एक ओर वे भाभी को मां मानने की बात कर रहे हैं और नियोग से उस आदर्श के खण्डित होने का दोष दिखा रहे हैं, दूसरी ओर भाभी (मां) से विवाह का समर्थन कर रहे हैं। विवाह करने में उन्हें दोष नहीं दिखा। अपेक्षा से भी देखें तो दोनों का शारीरिक संपर्क नियोग में अधिक होगा या विवाह में? नियोग में तो विवाह से भी कम सीमित संपर्क होगा।

प्रश्नों के अन्त में श्री मुंशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द जी) की आत्मकथा के पण्डित वाले उदाहरण को देकर आक्षेप किया है कि यह सब व्यभिचार जैसे विपरीत अधर्म-कर्म (नियोग) करने पर भी अपने को सदाचारी-धार्मिक

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

समझने जैसा है। इसका स्पष्टीकरण उपर्युक्त समाधान में हो ही चुका है। नियोग संयमित-नियमपूर्वक-सूचनापूर्वक-मान्यपुरुषों की सहमति पूर्वक होता है, अत: यह व्यभिचारवत् नहीं है। नियोग को ठीक तरह समझने की आवश्यकता है। स्थूल रूप से देखने पर और समाज में प्रचलित तथाकथित पति-पत्नीव्रत व सदाचार की मान्यताओं के आधार पर इसे अनुचित कहना ठीक नहीं है।

इस प्रकार महर्षि व आर्यसमाज की वेदानुकूल मान्यता के अनुसार नियोग-व्यवस्था उचित है, न्याय संगत है, मानवता-आत्मीयता-समानता पर आधारित है, समाज को अनेक दोषों से बचाने वाली है। नियोग-व्यवस्था से पुनर्विवाह का निषेध नहीं होती। नियमानुसार किये गये नियोग व पुनर्विवाह परिस्थिति विशेष व व्यक्ति-विशेष के लिए उचित हैं।

-ऋषि उद्यान, अजमेर।

दिल्ली का महासम्मेलन-मेरा अनुभव

जो गया महीना अक्टूबर का,
२५ से २८ तक अन्तर्राष्ट्रीय मेला था,
मैं चली गाड़ी में झज्जर से,
मैंने दिल्ली का दिल देखा,
रोहिणी में महासम्मेलन देखा।

देखी भीड़ आर्यों की,
देखे भीड़ में गृहस्थी-वानप्रस्थी,
थे साधु-सन्त-ब्रह्मचारी और मठधारी,
आये थे देश-विदेश से नर-नारी।

था खान-पान का प्रबन्ध भारी,
विद्वान् बोल रहे थे बारी-बारी,
अब देख जनता को रुका ना गया,
मेरा खुशी में दिल खिलता गया।

जब गाये जा रहे थे गुण ऋषि के,
लोगों के देखे भाव मैंने,
उनकी आँखों में था पानी,
गहराई में सोच रहे थे।

इतने में बदमाशों का टोल आया,
गदर-मचाया और शोर मचाया,
जब किया हौंसला वीरों ने,
दिखा ना सके तस्वीरों ने।

खदेड़ दिया वीरों ने,
जो देखा वह बताया,
गलती निकालो ना कहती है,
कवयित्री ''सुमित्रा''।

मेरा देश

देश के होंगे प्रहरी नौजवान,
वे करें परिश्रम, न थकान,
चलें धर्म पर नौजवान,
करें आर्य अपनी पहचान,
तब मेरा होगा देश महान्।

नौजवान करेंगे प्राणायाम,
सन्ध्या करेंगे सुबह-शाम,
तब काम करेंगे निष्काम,
सुख-शान्ति देश सुरक्षित,
तब मेरा होगा देश महान्।

लगा उपासना, विषय हटाना,
अपने ध्यान में करें संवेदना,
अन्तर्यात्रा में अच्छी भावना,
दृढ़ निश्चय कर साधना,
तब मेरा होगा देश महान्।

धारणा में ध्यान धरेंगे,
पाप हटाकर ओम् जपेंगे,
परोपकार से पुरुषार्थ करेंगे,
अपनी आत्मा शुद्ध करेंगे,
तब मेरा होगा देश महान्।

-सुमित्रा देवी आर्या,
१११/१५, आर्यनगर,
दूरभाष-९५४१२४७३६८

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

मृत्यु के बाद क्या?

-महेन्द्र आर्य

जब से सृष्टि बनी है, मानव निरन्तर देखता है-जन्म और मृत्यु की घटनाओं को। जन्म से मृत्यु के बीच का काल, जिसे हम जीवन कहते हैं, वो मनुष्य की आँखों के सामने होता है। हम देख पाते हैं कि कैसे एक शिशु अपनी माता के गर्भ में एक भ्रूण के रूप में जन्म लेता है, कैसे अपने पूरे विकास के बाद माता के गर्भ से बाहर आता है, कैसे निरन्तर सांसें लेता है, भोजन करता है, जिससे उसका शारीरिक विकास होता रहता है। आयु के अलग-अलग आयामों को पार करता हुआ वो शिशु पहले एक युवक, फिर एक प्रौढ़ और फिर एक वृद्ध में बदल जाता है। और फिर एक समय आता है, जबकि उसका वृद्ध शरीर निस्तेज हो जाता है, सांसों की निरन्तर चलने वाली धोंकनी बंद पड़ जाती है, और वो व्यक्ति एक शव के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रक्रिया को हम मृत्यु कहते हैं। ये भी हम देखते हैं कि ये मृत्यु असमय भी आ सकती है। मनुष्य किसी बीमारी से, किसी दुर्घटना से या किसी प्राकृतिक आपदा का शिकार होकर असमय मृत्यु को प्राप्त करता है।

इस मृत्यु के बाद क्या कुछ होता है, उसे हम या कोई भी जान नहीं सकता है। अलग-अलग धर्मों ने किसी व्यक्ति के साथ मृत्यु के बाद होने वाली संभावनाओं को अपने-अपने दर्शन के अनुसार मान रखा है। आर्यसमाज कर्मफल के सिद्धान्त को मानते हुए ये प्रतिपादित करता है कि मनुष्य की मृत्यु के पश्चात् उसका आत्मा अपने मनुष्य जन्म के किये हुए कर्मों की गुणवत्ता के अनुसार ईश्वर की सत्ता से अपने कर्मों का फल पाता है। उसके कर्म ये निर्धारित करते हैं कि उसे फिर एक बार मनुष्य योनि में जन्म मिलेगा, जिससे वो फिर एक बार कर्मक्षेत्र में उतर के अपने मानव जीवन को अर्थपूर्ण बना सके, या फिर उसे अपने कर्मों के फलस्वरूप किसी अन्य प्राणी के रूप में जन्म लेकर अपने कर्मों का भुगतान करना पड़ेगा। उसे पृथ्वी पर ही जन्म मिलेगा या किसी दूसरे ऐसे ग्रह पर जहाँ ईश्वर ने जीवन की व्यवस्था कर रखी हो। और यदि जीवात्मा ने मनुष्य जीवन में निष्काम कर्म किये हों, तो वह ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार मोक्ष को प्राप्त करेगा।

हमारे सारे सिद्धांतों का आधार वेदों में निहित ज्ञान है। दुनिया के सभी धर्मों में मृत्यु के उपरांत होने वाली स्थितियों पर विचार हैं। वास्तविकता ये है कि किसी भी दर्शन के लिए प्रत्यक्ष प्रमाण संभव नहीं है। इसका कारण भी बहुत सरल है, मृत्यु के बाद जीवात्मा का अपने मृत शरीर और समाज से कोई सीधा सम्बन्ध रह नहीं जाता। मरने के बाद जीवात्मा पुनः अपने पुराने परिवेश के संपर्क में रह नहीं पाता, तो उसके लिए ये संभव नहीं कि जीवात्मा अपने छूटे हुए सम्बन्धियों या समाज को कोई सूचना दे पाए।

जिस तरह दर्शन-शास्त्र निरन्तर मृत्यु के बाद होने वाली सम्भावनाओं को जानने के लिए प्रयत्नशील रहता है, उसी प्रकार आधुनिक विज्ञान भी निरन्तर इस विषय पर शोध करता रहता है। इस लेख में मैं ऐसे ही एक शोध की चर्चा करुंगा। विश्व के डॉक्टरों के लिए मृत्यु के बाद का अनुभव एक अनुसन्धान का विषय बना हुआ है, जिसे मेडिकल भाषा में कहते हैं-NDE (Near Death Experience) जिसका अर्थ है-मृत्यु का अनुभव। विश्व में बहुत से डॉक्टरों ने इस विषय पर अपने-अपने तरीके से शोध करने का प्रयास किया। पाठक सोचेंगे कि जिस क्षेत्र में मनुष्य की पहुँच ही नहीं है, उस क्षेत्र पर शोध कैसा? आइये थोड़ा खुलासा करें।

हम सब जानते हैं कि जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, तब उसका हृदय काम करना बंद कर देता है। उसके साथ-साथ उसकी श्वास, नाड़ी-स्पंदन आदि सब कुछ विराम पर आ जाता है। अगर वो व्यक्ति उस समय किसी ICU (Intensive Care Unit) यानि कि अस्पताल के प्राणरक्षक विभाग में होता है, तो देखा जाता है कि उस व्यक्ति की निरन्तर गतिशील सांस की लहरों के समान रेखाएं उससे जुड़े मॉनिटर के परदे पर अचानक निःस्पंद सी सरल रेखा का रूप ले लेती हैं। जिसे देखकर वहां मौजूद डॉक्टर और नर्सें ये समझ जाती हैं कि व्यक्ति की मृत्यु हो चुकी है। फिर भी डॉक्टर अपना हौंसला नहीं छोड़ते और कई ऐसे उपचार करते हैं, जिसे मेडिकल-भाषा में Resuscitation (पुनर्जीवन प्रयास) कहते हैं। इन उपचारों में मुख्य हैं-मृतक के मुख या नाक में किसी दूसरे के द्वारा मुख लगाकर वेग से सांसें फूंकना, मृतक के हृदय को जोर-जोर से दबाना आदि। इसका अर्थ ये हुआ कि ऐसे व्यक्ति कुछ समय के लिए मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, लेकिन फिर वापस अपने जीवन में लौट आते हैं।

आइये मृत्यु के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तनों

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

की चर्चा करें। जब हम सांस लेते हैं, तो हमारे शरीर के अन्दर ऑक्सीजन का प्रवेश होता है। हमारे फेफड़ों के माध्यम से ये ऑक्सीजन हमारे रक्त में घुल जाती है। ये रक्त हृदय से गुजरता है। ऑक्सीजन के कारण हमारा हृदय एक द्रव को धकेलने वाले पम्प की तरह काम करता है। रक्त में घुले ऑक्सीजन के कारण हमारे मस्तिष्क में स्थित लाखों कोशिकाएं जीवित रहती हैं और पूरा स्नायुमण्डल अपना काम करता है।

जब किसी व्यक्ति को हृदय-गति का अवरोध (Cardiac Arrest) होता है, तो हृदय का स्पन्दन बंद हो जाता है। इसका सबसे घातक परिणाम ये होता है कि मस्तिष्क के स्नायुमंडल में ऑक्सीजन की पहुँच बंद हो जाती है। ये व्यवधान कुछ उसी प्रकार का होता है-जैसे कि किसी सुनामी का किसी जीवन्त, गतिशील शहर पर अचानक प्रहार। क्षणों में सब कुछ तहस-नहस हो जाता है। बीस सैकेण्ड के अन्दर मस्तिष्क के अन्दर मौजूद ऑक्सीजन समाप्त हो जाता है और मनुष्य की चेतना चली जाती है। ऑक्सीजन समाप्त होने के पश्चात् मस्तिष्क की कोशिकाएं अपने लिए ऊर्जा ढूँढने की कोशिश करती हैं। कुछ ऐसी कोशिकाएं होती हैं, जिनमें ऊर्जा भरी होती है, लेकिन ये भण्डार भी बहुत जल्दी ही समाप्त हो जाते हैं। धीरे-धीरे मस्तिष्क की कोशिकाएं मरने लगती हैं। अगले १५ से २० मिनट वो समय होता है, जिसके अन्दर अगर रक्त का संचार पुनः शुरु कर दिया जाए तो पुनः चेतना आ सकती है। हृदय-गति बंद होने के कारण मृत्यु के सभी लक्षण होने से लेकर पुनः हृदय गति आने तक का काल चिकित्सा विज्ञान में क्लिनिकल-डेथ (परिभाषित मृत्यु) कहलाता है। इस काल के इस तरफ जहाँ पुनर्जीवन है, तो उस तरफ है स्थायी मृत्यु।

इंग्लैण्ड के एक विशेषज्ञ चिकित्सक डॉक्टर सैम परनिया ने एक शोध किया-ऐसे लोगों पर जो अपनी मृत्यु के द्वार के अन्दर जाकर लौट आये। डॉक्टर परनिया के शोध का विषय था, कि क्या इस संक्षिप्त मृत्युकाल की कोई भी अनुभूति ऐसे व्यक्तियों को याद रहती है। डॉक्टर परनिया कहते हैं कि इस शरीर में स्थित मस्तिष्क के आधार पर कोई स्मृति रहने का प्रश्न ही नहीं होता, क्योंकि मस्तिष्क की सभी कोशिकाएं अपना-अपना काम करना बंद कर देती हैं, इसलिए मस्तिष्क द्वारा किसी भी प्रकार अपनी मृत्यु के काल की स्मृति को संजोकर रखना असंभव है। डॉक्टर परनिया के शोध ने ये बताया कि इस तरह पुनर्जीवन प्राप्त करने वाले लोगों में से अलग-अलग प्रयोगों में ये पाया गया कि ६ से १० प्रतिशत लोग ऐसे थे, जिन्होंने अपने इस मृत्यु के अनुभव का उल्लेख किया। उन्होंने अपने शोध पर स्वयं प्रश्न खड़े किये और उनका उत्तर भी ढूँढा।

उन्होंने चार संभावनाओं पर विचार किया-**१.** संभवतः मनुष्य अपने हृदय-गति के अवरोध के पहले की स्थिति का वर्णन कर रहा हो, क्योंकि उसे शायद पता ही न चला हो कि कहाँ जीवन समाप्त हुआ और कहाँ मृत्यु शुरु हुई। लेकिन उनके अपने इस प्रश्न का उत्तर थे वो लोग, जिन्होंने ऐसी-ऐसी बातें बताईं जो कि ऑपरेशन थियेटर में उन्हें पुनर्जीवन देने के दौरान घटित हुईं थीं। **२.** संभवतः हमारी मस्तिष्क की गतिविधि नापने की क्षमता के बाहर कोई क्षमता रही हो, जिसके कारण ऐसे व्यक्ति उन घटनाओं को जान पाए हों। इस सम्भावना को भी उन्होंने नकार दिया, क्योंकि स्नायुमंडल से किसी प्रकार की विद्युत् नहीं बन रही थी, और इसके नीचे के स्तर पर मस्तिष्क के लिए कुछ भी देखना, समझना या याद रखना संभव ही नहीं है। **३.** उन्होंने एक और सम्भावना पर विचार किया कि संभवतः ऐसी घटनाओं को याद रखने के लिए मस्तिष्क के अलावा कोई दूसरा ही अंग हो। **४.** उन्होंने एक और सम्भावना पर भी विचार किया कि मस्तिष्क के निष्क्रिय हो जाने पर भी शायद किसी प्रकार की चेतना बची रहती हो।

बारहाल डॉक्टर सैम परनिया के शोध पर संदेह करने की गुंजाइश इसलिए नहीं है, क्योंकि उनका शोध किसी दार्शनिक सिद्धांत पर आधारित न होकर पूरी तरह चिकित्सा विज्ञान पर आधारित था। वो किसी धर्म या धर्मगुरु के लिए ये शोध नहीं कर रहे थे, बल्कि मानव मात्र के कल्याण को केन्द्र में रखकर शोध कर रहे थे। उनके शोध के आधार पर जो अनुभव सामने आये उनमें से कुछ इस प्रकार थे-**१.** अधिकतर लोगों ने अपने अनुभव में बताया कि इस संक्षिप्त मृत्यु के दौरान वो एक ऐसी गुफा से गुजर रहे थे, जिसमें उनके आसपास बहुत चमकदार रोशनी थी। ये रोशनी बहुत ही आनन्ददायक थी, कष्ट या दर्द की कोई अनुभूति लेशमात्र भी नहीं थी। **२.** अधिकतर लोगों ने बताया कि जिस समय ऑपरेशन कक्ष में पुनर्जीवित करने की कोशिश में डॉक्टर और नर्सें लगे थे, वो स्वयं उस सारी घटना को कहीं छत के कोण से देख पा रहे थे। एक महिला ने तो यहाँ तक बताया कि जब डॉक्टर पूरे जोर से उसे पुनर्जीवित करने की कोशिश में थे, तब उनका पैर पलंग के नीचे मौजूद एक बाल्टी से टकरा गया और बाल्टी पास ही मौजूद एक चल-टेबल से टकरा गयी, और सारे औजार नीचे गिर गए। डॉक्टर परनिया

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

के अनुसार इस महत्त्वपूर्ण घटना को बताना एक महत्वपूर्ण बात है। यानि कि अपने शरीर से अलग सत्ता होने का अनुभव सभी ने किया। **३.** एक बहुत ही दिलचस्प अनुभव था एक महिला का, जिसकी एक गंभीर ऑपरेशन के दौरान मृत्यु हो गयी, उस महिला ने बताया कि उसे लगा डॉक्टरों ने प्रयास कर के उसकी साँसों को पुन: शुरू करवाया जैसे वो किसी सुरंग के अन्दर से जा रही थी, जिसके अंतिम छोर पर बहुत तीव्र प्रकाश पुंज था। जब वो उस गुफ़ा से बाहर निकली, तो लगा एक बहुत सुन्दर मैदान में पहुँच गयी। वहां उसे मिली एक युवा स्त्री जिसने सफेद वस्त्र धारण किये हुए थे। उसने उससे कहा कि आपको वापस जाना है, क्योंकि आपको अपने जीवन में कई जरूरी काम समाप्त करने हैं। उसे उसकी बात सुनकर अपने जीवन से अलग होने का आभास हुआ और साथ ही उसे याद आये उसके तीनों बच्चे जिसमें सबसे छोटा तो मात्र २ साल का ही था। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि वो अभी उन्हें छोड़ कर कहीं जा नहीं सकती। **४.** बहुत से लोगों ने बताया कि उन्हें अपने दिवंगत परिवार जनों के दर्शन और साक्षात्कार हुए। **५.** करीब-करीब सभी ने बात बताई कि उन्हें इस स्थिति में किसी प्रकार के भय का अनुभव नहीं हुआ, बल्कि एक अलग ही प्रकार के उत्तम आनन्द का अनुभव हुआ। **६.** डॉक्टर परनिया के शोध का अन्तिम हिस्सा ऐसे पुनर्जीवन प्राप्त व्यक्तियों के बाद के जीवन पर था। उनका कहना है कि अभूतपूर्व परिवर्तन ऐसे लोगों के जीवन में आया जो कि उन्हें जीवन की बुराइयों का त्याग करके अच्छाइयों की तरफ ले जा रहा था।

ऐसी बातें सुनने में विचित्र लगती हैं। शायद इसे किसी नए अन्धविश्वास का नाम भी दे दिया जाए। एक आम भारतीय की स्वाभाविक प्रतिक्रिया शायद ये होगी की ये सब कुछ मनगढंत है। उसके मन में कुछ ऐसे सवाल उठेंगे- **१.** शायद ऐसे लोग मनगढ़ंत कहानियां सुना रहे होंगे। डॉक्टर परनिया ने भी इस सम्भावना पर विचार किया। इसलिए उन्होंने ऐसे व्यक्तियों से बातचीत तब की, जब वो पुनर्जीवन के तत्काल बाद बात करने की स्थिति में आ गए थे। किसी व्यक्ति को अगर समय दिया जाए, तभी वह कहानियां गढ़ पाता है। दूसरी बात ये थी कि उन्होंने उस व्यक्ति को अपने प्रश्नों का कारण नहीं बताया, वर्ना शोध की बात सुनकर कोई भी व्यक्ति जरूरत से ज्यादा सोचकर उत्तर देगा। **२.** शायद व्यक्ति की पूर्ण रूप से मृत्यु नहीं होती होगी। इस सम्भावना को भी शोध में शामिल किया गया। चिकित्सा विज्ञान में मृत्यु की परिभाषा के सारे लक्षण पाए जाने वाले लोगों को ही शोध का विषय बनाया गया। **३.** शायद परीक्षित लोग किसी धर्म विशेष के लोग रहे होंगे, जिन्हें बचपन से मृत्यु के बाद होने वाली संभावनाओं को उनके विवरण के अनुसार बताया गया होगा, वही बातें उनके अवचेतन मन में बैठी होंगी। डॉक्टर परनिया ने इस बात को भी खारिज कर दिया, क्योंकि उनके शोध-परीक्षण में शामिल लोग विभिन्न धर्मों के थे, बल्कि कुछ तो बिलकुल नास्तिक ही थे।

डॉक्टर परनिया की एक पुस्तक 'What Happens When We Die' (क्या होता है जब हम मरते हैं।), में उन्होंने अपने शोध का पूरा निचोड़ लिखा है। मैंने उनकी किताब को पढ़ा है। उनसे पहले भी और कई डॉक्टरों ने इस विषय पर काम किया है। नब्बे के दशक में लन्दन के किंग्स कॉलेज हॉस्पिटल के डॉक्टर पीटर फेन्विक ने N DE पर अपना शोध किया। उन्होंने ३००० लोगों में से ३०० ऐसे लोग छांटे जो पूरी तरह इस शोध के सिद्धांतों के उपयुक्त थे। उनका शोध प्रबन्ध छपा एक पुस्तक के रूप में, जिसका नाम था-The Truth In the Light (प्रकाश में सच)। इसके पहले सत्तर के दशक के मध्य में एक अमेरिकन डॉक्टर रे मूडी ने १५० पुनर्जीवन प्राप्त व्यक्तियों पर अपना शोध किया, जो उनकी पुस्तक Life After Life (जीवन के बाद जीवन) में प्रकाशित हुआ। इनके अलावा और बहुत सारे सुप्रसिद्ध डॉक्टर इस विषय पर काम कर चुके थे। डॉक्टर परनिया ने पिछले सभी शोधों में संभावित गलतियों को सुधार करके अपना शोध शुरू किया था। जिस शोध में विश्व के बड़े-बड़े डॉक्टर उनसे मिलकर काम कर रहे थे, जिसके लिए अमेरिका और इंग्लैण्ड के बड़े-बड़े अस्पतालों ने उनकी मदद की, उस शोध का उद्देश्य विश्व को मूर्ख बनाना नहीं हो सकता।

जब मैं डॉक्टर परनिया के शोध को वैदिक-धर्म की कसौटी पर तौलता हूँ तो मुझे कुछ ऐसे निष्कर्ष मिलते हैं- **१.** भौतिक शरीर से अलग जीवात्मा की सत्ता का होना इस शोध से सिद्ध होता है। **२.** जिस प्रकार जीवात्मा अपने कर्मफल के अनुसार किसी शरीर में जन्म ले सकती है, उसी तरह जीवात्मा अपने किसी अपूर्ण कार्य की सम्पूर्ति के लिए ईश्वर द्वारा पुन: उसी शरीर में भी भेजी जा सकती है। **३.** जीवात्मा अपनी शरीर-मुक्त अवस्था में बिना किसी कष्ट के बहुत ही आनन्द के भाव में रहता है। संभवत: यह स्थिति मोक्ष की स्थिति का ही एक सूक्ष्म रूप है।

यह विषय वैदिक-शोध का भी है। इस शोध की सच्चाई में जाने के लिए भारत के हृदय रोग तथा अन्य

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

विशेषज्ञों को अपना स्वतन्त्र शोध करना चाहिए। इस शोध के लिए उनके दैनिक जीवन में आने वाले मरीजों में से ही लोग होते हैं। शोध का माध्यम उन लोगों से बातचीत ही है। मैं आशा करता हूँ कि वैदिक दृष्टिकोण वाले डॉक्टर परनिया के शोध पर गंभीरता से अध्ययन करेंगे।

-मुम्बई, ९८२१०२१३२३

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. विद्वद् गोष्ठी-'**आर्यसमाज की ध्यान पद्धति' तृतीय**, (मात्र आमन्त्रित विशेषज्ञों के लिए) १३-१५ मार्च २०१३, ऋषि उद्यान, अजमेर।

२. **आर्यसमाज की ध्यान पद्धति-ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर**। ११ से १७ अप्रैल २०१३, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर नि:शुल्क है। **१० अप्रैल सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी**। शिविर का समापन १७ को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००६९६१, समय-रात्रि ८ से ८.३०। पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१। ईमेल-psabhaa@gmail.com

३. विद्वद् गोष्ठी-'**आर्यसमाज की यज्ञपद्धति**' तृतीय, (मात्र आमन्त्रित विशेषज्ञों के लिए), २७ से ३० जून २०१३, आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, नर्मदापुरम् होशंगाबाद, मध्यप्रदेश।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या - 091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

भ्रमोच्छेदन

अर्थात्

-धर्मवीर

पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक की शंकायें और उनका समाधान

[परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश के ३७वें संस्करण पर उन दिनों अनेक प्रश्न/आक्षेप किये गये थे। सभा द्वारा उनका उस समय भी उत्तर/समाधान किया गया था। ऐसा एक प्रयास परोपकारी अप्रैल १९९२ के सम्पादकीय में सभा के तत्कालीन संयुक्त मन्त्री प्रो. धर्मवीर ने किया था। जो प्रश्न तब उठाये गये थे, आज भी उन्हें बार-बार उठाया जा रहा है। उनका उत्तर जो तब था, वह आज भी जानने योग्य है। वह सम्पादकीय यहां पुनः प्रकाशित किया जा रहा है, कृपया इसे उसी सन्दर्भ में पढ़ें।]

एक बार श्रद्धेय पं. युधिष्ठिर मीमांसक अजमेर आये थे, तब आग्रह पूर्वक मैंने उन्हें सभा कार्यालय में आमन्त्रित किया। वे कष्ट उठाकर पधारे और उनसे मैंने ऋषि के हस्तलेखों के बारे में कुछ विचार-विमर्श किया। हस्तलेख के प्रकोष्ठ में उनके उद्‌गार थे-''आज लगभग ३५ वर्ष पश्चात् मैं इस सामग्री के पास आया हूँ।'' कुछ कारण थे कि पं. जी और सभा में दूरी बहुत बढ़ गई थी, उनका कारण और उसके प्रकार के हम साक्षी भी नहीं और उसके विवेचन की आवश्यकता भी नहीं। जब कभी उनसे कोई बात विदित हुई तो उसका समाधान हो, यह हमारा प्रयास रहा है।

आपने अपनी आत्मकथा में लिखा, तीन पुस्तकें अभी तक अप्रकाशित हैं। हमने निवेदन किया-इन हस्तलेखों में बतला देवें कि वेद के कौन से सूक्त अप्रकाशित हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि अब मेरे लिये भी खोजना सम्भव नहीं है। परोपकारिणी सभा के विगत अच्छे-बुरे प्रसंगों से परिचय होने के कारण सभा में डॉ. भवानी लाल जी भारतीय की और मेरी पं. मीमांसक जी के प्रति विशेष श्रद्धा है और उसका कारण उनके वैदुष्य एवं जीवन में किये महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। अतः हम दोनों का सभा में और पण्डित जी में निकटता लाने का प्रयत्न रहा है। यह निश्चित बात रही कि माननीय पं. जी का बहुत समय से सभा से सम्पर्क और सम्बन्ध नहीं रहा। अतः सभा के पास जो सामग्री थी, वे इधर के वर्षों में उसका उपयोग नहीं कर सके। मुन्शी समर्थदान और स्वामी दयानन्द के क्या सम्बन्ध थे, इस विषय में श्रद्धेय पं. जी परमप्रमाण हैं और इसमें किसी को भी क्या आपत्ति हो सकती है। स्वर्गीय हरविलास जी शारदा और मीमांसक जी में या श्री महेशप्रसाद मौलवी में क्या विचार हुआ, इसमें भी हमें कुछ नहीं कहना।

इस सारे इतिहास से वर्तमान में सत्यार्थप्रकाश के सम्पादित संस्करण पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। बात इतिहास की नहीं है, बात केवल तथ्यों की है। इसलिये मान्यवर पं. जी का सारा परिश्रम ईमानदारी से किया जाने पर भी बेमानी हो गया है। आदरणीय मीमांसक जी सभा के कार्यों की प्रशंसा में इतना अच्छा प्रमाण दे गये कि बलात् कहने की इच्छा होती है-'अयत्न सम्पन्न समीहितार्थाः संजाताः स्म' जबकि उन्होंने मुन्शी समर्थदान के पत्र को उद्‌धृत करते हुए लिखा है-''**आपने भाषा बदलने की आज्ञा दी, सो मालूम हुआ.....कापी में गड़बड़ी बहुत आती है। असम्बद्ध भाषा बहुत आती है.....जो आपकी कॉपी के अनुकूल छाप दिया जाता, तो ग्रन्थ बहुत अशुद्ध हो जाता।**'' **-ऋ.द.को लिखे पत्र, भाग ४ पृ. ४६२**

अब विचारणीय है कि जो शुद्धता है, उसका श्रेय मुन्शी समर्थदान को जाता है। तो क्या स्वामी जी ने इतना अशुद्ध लिखाया था? इसका उत्तर हमने इस संस्करण में दे दिया है। स्वामी जी की भाषा प्रथम कॉपी की है। दूसरी कॉपी की भाषा यदि पहली से भिन्न है तो वह निश्चय ही लेखक की है, स्वामी जी की नहीं। यह सत्य है कि स्वामी जी ने इसे भी पढ़ा और संशोधित किया, परन्तु पहले को देखकर नहीं। इसलिये प्रथम कॉपी जो स्वयं बोलकर लिखाई है और पढ़कर संशोधित भी की है, उसकी नकल कॉपी करते हुए कहीं सामग्री छूट गई, कहीं अनावश्यक बढ़ाई गई है, कहीं प्रसंग विरुद्ध है, कहीं पुनरावृत्ति है। यह बात प्रमाण पुरस्सर कही जा सकती है। आदरणीय मीमांसक जी ने लिखा है कि उन्होंने सभी संस्करणों के पाठ मिलाये हैं। उनमें नगण्य पाठ-भेद था, परन्तु ग्रन्थ सुरक्षित रहा। मान्य पं. जी २५-२६ ही नहीं, कुछ १०० संस्करणों का भी मिलान करते तो भी उनका विचार यही रहता और ग्रन्थ इतना ही सुरक्षित भी रहता। परन्तु यदि प्रथम पाण्डुलिपि आपको या किसी भी विद्वान् को सुलभ होती तो परिणाम वही होता, जो वर्तमान संस्करण में है। जब तक किसी के पास आधारभूत सामग्री नहीं थी, तो वह किससे तुलना करता और किसको सत्य मानता। अतः सारी बातें अपनी जगह ठीक होने पर भी

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सारहीन हैं। जिन सज्जनों ने प्रथम कॉपी का उपयोग किया है, वह कहीं-कहीं और कभी-कभी ही किया है। यदि पूर्ण मिलान किया जाता तो तथ्य तब भी वही रहते, जो आज हैं। अत: माननीय पं. जी की दृष्टि में सभा असत्य होने पर भी तथ्य उनके विपरीत जा रहे हैं। हम उदाहरण के लिये थोड़े से तथ्य प्रस्तुत करते हैं। यदि श्रद्धेय पं. जी ने प्रथम प्रति देखी होती, तो उनकी टिप्पणी और संशोधन इस दशा को प्राप्त नहीं होते-

क-तृतीय समुल्लास में गायत्री-जप का विधान करते हुए प्रथम प्रति में ''**जप मन** से करना उत्तम है'' यह लेख है।

द्वितीय प्रति में लेखक से प्रमादवश '**प**' छूट गया और पाठ बन गया 'परन्तु यह **जमन** से करना उत्तम है'' पढ़ते समय संगति लाने के लिये 'ज' के आगे 'न्म' जोड़कर '**जन्म**' कर दिया गया। और माननीय पं. जी ने इस पर पण्डित लेखराम जी के संशोधन को गलत बताकर 'जन्म' शब्द पर आधा पृष्ठ की टिप्पणी दे दी और द्वितीय प्रति को प्रामाणिक ठहरा दिया। पाठक विचार करें, कौनसा पाठ उचित है-प्रथम प्रति का या द्वितीय प्रति का?

ख-भक्ष्याभक्ष्य प्रकरण में प्रश्न विशेष रूप से पूछा गया है-भंगी के हाथ का खाना चाहिये या नहीं? प्रथम प्रति में उत्तर भी इतना ही है-चाण्डाल चाण्डाली का शरीर दुर्गन्ध के परमाणुओं से भरा होने से खाना उचित नहीं।

द्वितीय प्रति में इसके साथ **और** शब्द जोड़कर **भंगी, चमार, नीच** आदि कर दिया है और वाक्य भी अधूरा है, जिसकी अगले पृष्ठ से संगति नहीं बैठती, जबकि प्रथम प्रति का वाक्य पूर्ण है।

ग-वेद के गलत अर्थ संदर्भ में प्रथम प्रति में यजमान पत्नी का अश्व समागम का प्रसंग बड़े संक्षेप में है। द्वितीय प्रति में इसका अनावश्यक विस्तार किया गया है।

घ-नवम समुल्लास में ''योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:'' सूत्र का अर्थ करते हुए प्रथम प्रति का पाठ-''मनुष्य रजोगुण-तमोगुणयुक्त कर्मों से मन को रोक, शुद्ध सत्वगुण युक्त हो, पश्चात् उसका निरोध कर'' है।

दूसरी प्रति का पाठ इस प्रकार है-''मनुष्य रजोगुण-तमोगुण युक्त कर्मों से मन को रोक, **शुद्ध सतोगुण युक्त कर्मों से भी मन को रोक**, सत्वगुण युक्त हो पश्चात् उसका निरोध कर।''

मान्य पं. जी ने अन्यत्र तो बहुत टिप्पणियाँ दे डालीं परन्तु यहां कोई सम्मति नहीं दी। क्या अब पं. जी बता सकते हैं कि यहां पर प्रथम प्रति के पाठ को स्वीकार कर सभा ने कौन सा क्रूर कर्म किया है?

ङ-एकादश समुल्लास का प्रथम प्रति का पाठ है-**नवीन**-क्या तुम वसिष्ठ, शङ्कराचार्य आदि और निश्चलदास पर्यन्त से अधिक पण्डित हो, उनने जो लिखा है सो विचार करके लिखा है, वे तुमसे बड़े पण्डित थे।

सिद्धाती-तुमको क्या दिखता है?

नवीन-हमको तो वसिष्ठ, शंकराचार्य और निश्चलदास आदि अधिक दीखते हैं।

मान्यवर मीमांसक जी सम्मत पाठ इस प्रकार है-

नवीन-क्या तुम वशिष्ठ, शंकराचार्य आदि और निश्चलदास पर्यन्त जो तुमसे अधिक पण्डित हुये हैं, उन्होंने लिखा है उसको खण्डन करते हो, हमको तो वसिष्ठ शंकराचार्य और निश्चलदास अधिक (विद्वान्) दीखते हैं।

समादरणीय पं. जी ने कोष्ठक में **विद्वान्** शब्द डालकर उद्धार तो कर दिया, परन्तु **मध्य में एक प्रश्न ही छूट गया,** इसका उन्हें बोध न हो सका। इसमें पं. जी का दोष नहीं है, क्योंकि प्रथम प्रति उनके सामने नहीं थी। यदि प्रश्न बीच में डालकर सभा ने अवांछित पापकर्म किया है, तो मेरे विचार से वह करना ही चाहिए था।

च-रामानुज के मत की आलोचना के प्रसंग में प्रथम प्रति का पाठ इस प्रकार है-

''इससे विरुद्ध रामानुज का जीव और ब्रह्म और माया तीनों नित्य हैं, **शङ्कराचार्य का अद्वैत अर्थात् जीव ब्रह्म एक, ब्रह्म एक ही है। दूसरा कोई वस्तु वास्तविक नहीं है।** यहां शंङ्कराचार्य का मत ब्रह्म से अतिरिक्त जीव और कारण वस्तु का न मानना अच्छा नहीं।''

आदरणीय पं. जी के पाठ में स्थूलाक्षर पाठ नहीं है। इसके जुड़ने से कौन सी सिद्धान्त हानि हुई है, यह तो वे ही बता सकते हैं, परन्तु इसके न होने से प्रसंग में अस्पष्टता अवश्य आती है।

सम्मान्य विद्वद्वर मीमांसक जी का कहना है कि मुंशी समर्थदान द्वारा काटी गई आयतें न छापी जायें और मौलवी पं. महेशप्रसाद जी का भी ऐसा ही विचार था। जहां ये आयतें छपने से पहले काटी गई हैं, वहां लिखा गया है। यह बात पहले आ चुकी है, अत: व्यर्थ है। प्रथम तो यह कोई रहस्य नहीं है, जो इन आयतों के प्रकाशित होने से महान् अनर्थ हो गया हो। स्वामी जी महाराज इस प्रकरण के अन्त में लिखते हैं-''इस विषय में कहां तक लिखें, कुरान तो मानो पुनरुक्ति दोष का भण्डार है।'' यही दोष बताना

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

स्वामी जी महाराज का उद्देश्य भी था। इसीलिये स्वामी जी महाराज ने इन आयतों का व्याख्यान किया है।

एक ओर पं. जी प्रथम प्रति के स्थान पर द्वितीय प्रति की प्रामाणिकता पर जोर दे रहे हैं और दूसरी ओर कटी आयतों में उसी को अमान्य कर रहे हैं, ऐसा क्यों?

श्रद्धेय मीमांसक जी ने सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण को जलाने का सत्परामर्श देते हुए भय दिखाया है–''कोई विरोधी सनातनी, ईसाई–मुसलमान सत्यार्थप्रकाश बदलने के विषय में न्यायालय में मुकदमा चला सकता है। तब सभा को लेने के देने पड़ जायेंगे।''

कोई कब मुकदमा चलायेगा पता नहीं, परन्तु पण्डित प्रवर मीमांसक जी ने सबसे बड़ी अदालत–जनता की अदालत में तो सभा पर मुकदमा ठोक ही दिया। यहां इतना स्पष्ट करना पर्याप्त होगा कि यदि मुकदमा होगा तो न्यायालय परीक्षा करके निर्णय देगा। परन्तु मान्य पं. जी ने बिना पक्ष सुने ही फैसला भी दे दिया। मैं पं. जी की सेवा में निवेदन करना चाहूंगा कि यदि स्वयं स्वामी दयानन्द सरस्वती, मुन्शी समर्थदान अथवा पं. युधिष्ठिर मीमांसक प्रथम प्रति से द्वितीय प्रति का अक्षरश: मिलान करते, तो वे भी इसी निष्कर्ष पर पहुंचते, जिस पर सभा पहुंची है।

तब शताब्दी संस्करण में पं. जी को जितने कोष्ठक बढ़ाने पड़े हैं, संभवत: न बढ़ाने पड़ते। न पाठक्रम बदलना पड़ता, न इतनी टिप्पणियों की भरमार ही होती। पं. जी द्वारा सम्पादित संस्करण के सम्बन्ध में लिखना हमारा उद्देश्य नहीं है, परन्तु पं. जी ने जिस कमी को पूरा करने की इच्छा से वह सब किया है, सभा ने उसे ऋषि–दृष्टि से करने का यत्न किया है, तब किस का कार्य अधिक उपयोगी और प्रामाणिक होगा पाठक स्वयं सोच सकते हैं।

श्रद्धेय मीमांसक जी लिखते हैं–''सम्पादक को किन–किन बातों का ज्ञान होना चाहिये, कितना अनुभव होना चाहिए।'' वैसे पं. जी सम्पादक से और उसकी योग्यता से अनभिज्ञ नहीं होंगे, क्योंकि दोनों एक ही क्षेत्र में कार्य करते हैं और परस्पर भली प्रकार परिचित हैं। परन्तु पाठकों की दृष्टि से जानने योग्य तथ्य है कि श्रद्धेय पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक और सम्पादक श्री विरजानन्द दैवकरणि निष्ठापूर्वक कार्य सम्पादन करने, कार्य को सम्पन्न करने के लिये घोर परिश्रम करने में समान हैं।

आदरणीय पं. जी वयोवृद्ध हैं, आर्यजगत् में सुविदित हैं, परन्तु पं. जी सम्भवत: यह न जानते हों कि जिस व्यक्ति ने सम्पादन का गुरुतर कार्य सम्पन्न किया है, उसे दर्जनों वैदिक एवं ऐतिहासिक–ग्रन्थों के सम्पादन का २० वर्ष से अधिक का अनुभव है। कई सौ वर्ष पुराने शतश: हस्तलिखित ग्रन्थों को आद्योपान्त पढ़ने, परीक्षण करने का भी अनुभव है। प्राचीन मुद्राओं, शिलालेखों के अधूरे लेखों की संगति लगाने का दीर्घकालीन अभ्यास है। सम्पादक ने आपकी ही भांति महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा निर्दिष्ट आर्ष–प्रणाली से शास्त्रों के पठन–पाठन, मनन–चिन्तन का लाभ प्राप्त किया है। इस प्रकार योग्य गुरु के योग्य शिष्य होने का गौरव उसे प्राप्त है।

अब रही एक आदमी को कार्य का अधिकार देने की बात। श्रद्धेय मीमांसक जी का शताब्दी संस्करण कितने लोगों द्वारा सम्पादित है? इस समाज की मजबूरी है कि जिसे सूझता है, उसे ही करना पड़ता है। पुनरपि ध्यातव्य है कि सभा ने इस सम्बन्ध में अनेक बैठकें बुलाई हैं, विद्वानों से विचार विमर्श हुआ और सम्पादक द्वारा किये कार्य का सभा ने स्वयं मूल्यांकन किया है। अत: एक व्यक्ति के अधिकार की बात का औचित्य नहीं है। फिर सम्पादक ने जो परिश्रम किया है, वह कितना प्रशंसनीय हो सकता है, यह तो मान्य मीमांसक जी जैसा कृतकार्य व्यक्ति ही समझ सकता है। ग्रन्थ को आद्योपान्त बीसियों बार पढ़ना और एक–एक अक्षर को मिलाना, ऐसा भूरि–परिश्रम सब लोग नहीं कर सकते।

मनुष्य होने के नाते भूल किसी से भी सम्भव है, परन्तु नगण्य भूलों से परिश्रम व्यर्थ नहीं हो जाता। जो कार्य मुन्शी समर्थदान ने किया है, वही कार्य सम्पादक ने अब किया है। अत: इससे ग्रन्थ का गौरव बढ़ा है, घटा नहीं।

जानकारी के लिए बताना चाहूंगा कि सभा इस कार्य को आगे भी जारी रखेगी जैसा कि श्रद्धेय मीमांसक जी ने लिखा है। पं. जी को उनके संपर्क–सूत्र ने बतलाया कि संस्कारविधि का पाठ मिला रहे हैं। संस्कारविधि का नहीं, पहले हम ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका का पाठ मिलान करके देखना चाहते हैं। यह कार्य कठिन और महत् है, परन्तु करना आवश्यक है। जिन ग्रन्थों की प्रथम प्रति सुलभ है, उसके अवलोकन से अनेक समस्याओं का समाधान हो सकता है। अन्य ग्रन्थों में भी इस बात की सम्भावना इसलिये है, क्योंकि गत दिनों डॉ. वेदपाल वर्णी, जो परोपकारिणी सभा की ओर से यजुर्वेद भाष्य पर टिप्पणी लिख रहे हैं, उन्होंने देखा कि १६/६ मन्त्र के **'हेड'** पद का अर्थ **प्रथम प्रति** में **द्वितीयान्त** मानकर किया गया है, परन्तु **द्वितीय प्रति** में उसे **प्रथमान्त** स्वीकार कर अर्थ किया गया है, जबकि अधिकांश भाष्यकार उसे द्वितीयान्त ही स्वीकार करते हैं। प्रथम प्रति में

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

और द्वितीय प्रति में यह अन्तर कैसे आया, यह स्पष्ट करने की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में सभा के कार्य का महत्त्व स्वयं स्पष्ट है।

महामहोपाध्याय मीमांसक जी लिखते हैं–"प्रथम फार्म भी बदल कर छापा है। साधारण जन इसे नहीं समझ सकते, परन्तु मुझ जैसे व्यक्ति से यह नहीं छिप सकता।" इस लेखन का क्या उद्देश्य है, हमारी समझ में नहीं आया। मान्य पं. जी यदि ये समझते हों कि हमने उनके भय से फार्म बदलकर छापा है, तो हमें ऐसा करने की आवश्यकता न तब थी, न आज है। यदि हमने अपनी सुविधा के लिये ऐसा किया है, तो कौन सी असाधारण बात मान्य पं. जी की खोज में निकली।

विषय–सूची और सम्पादकीय दुबारा छपने ही थे। अत: कभी प्रेस की सुविधा के लिये छपने में उलटफेर कर लिया गया हो, तो इससे सम्मान्य मीमांसक जी को अनुसन्धान करने का अवसर मिला और उन्होंने लेख का आधा पृष्ठ इस पर लगा दिया। इस प्रकार उनकी इस शंका का समाधान तो यन्त्रालय व्यवस्थापक का विषय है।

वस्तुस्थिति यह है कि जब पं. जी को पुस्तक दिखाई थी, तब नमूने के लिए दो–चार प्रतियां तैयार की गई थीं, जिससे मूल्य आदि का निर्धारण करने में सुविधा हो। उस समय प्रारम्भिक पृष्ठ भी १० ही छापे थे, वे भी सब नहीं छपे थे। ग्रन्थ का मूल्य एवं सभी पृष्ठों के स्थान निश्चित कर लेने के पश्चात् ही अन्तिम मुद्रण सम्पन्न हुआ। विषय सूची भी पूरा ग्रन्थ छपने के बाद ही छापी जाती है। इस प्रकार फार्म दुबारा छपने की इतनी सी बात है, जिसे पं. जी ने अनावश्यक तूल दिया है।

अधिकारियों की योग्यता व ऋषिभक्ति पं. मीमांसक जी से किसी प्रकार कम नहीं है। सभा के वर्तमान प्रधान स्वामी सर्वानन्द सरस्वती और मंत्री श्री गजानंद आर्य दोनों के विषय में आर्यजगत् को बताने की आवश्यकता नहीं। दोनों स्वाध्यायी, कर्मठ, निष्ठावान् और आर्यजगत् के लिए सम्मान्य हैं। आदरणीय प्रधानजी ने तो वेदवाणी पत्रिका में जैसे ही लेख पढ़ा तुरन्त मुझे लिखा पं. जी का उत्तर देते हुए कठोर भाषा का उपयोग मत करना, पं. जी विद्वान् और हम सबके सम्माननीय हैं। दूसरी ओर महामहोपाध्याय मान्यवर मीमांसक जी सभा प्रधान स्वामी सर्वानन्द जी महाराज के अपराध के लिए दण्ड–विधान करा रहे हैं। यह तो अपना–अपना स्वभाव है। इस विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

अत: परोपकारिणी सभा का सभी आर्यमहानुभावों से, प्रकाशकों से, संस्थाओं से अनुरोध है कि इसी संस्करण को प्रामाणिक मानते हुए इसी का प्रचार–प्रसार और प्रकाशन करें। जिससे स्पष्टता और एकरूपता बनी रह सके।

अन्त में श्रद्धेय मीमांसक जी का धन्यवाद करता हूं जिनकी कृपा से सभा कार्य की चर्चा हुई और विद्वानों को देखने समझने और कार्य का मूल्यांकन करने का अवसर मिला। प्रभु से प्रार्थना है ईश्वर पं. जी को दीर्घायु और उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करे जिससे वे लम्बे समय तक हमारा मार्गदर्शन करने में समर्थ हो सकें। इस निवेदन के साथ प्रसंग समाप्त करना चाहता हूं–

मैवं वोचत तत्वं हि दुष्प्रापं पक्षसंश्रयात्।।

–तत्कालीन संयुक्त मन्त्री, परोपकारिणी सभा।

वैचारिक क्रान्ति हेतु
सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार–प्रसार की योजना

सभी धर्म प्रेमी सज्जनों, आर्यसमाजों व संस्थाओं से निवेदन है कि इस कार्य को सफल बनाने हेतु शीघ्रता से अपना आर्थिक सहयोग परोपकारिणी सभा को भिजवायें ताकि तदनुरूप कार्य को आगे बढ़ाया जा सके। सहयोग भिजवाते समय **सत्यार्थप्रकाश का प्रचार–प्रसार** शीर्षक लिखना ना भूलें। धन्यवाद।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क सूत्र–आचार्य दिनेश शास्त्री, ऋषि उद्यान, अजमेर। चल दूरभाष–०७७३७९०४९५०, ०९६०२९२१३७३

सब मनुष्यों को परमेश्वर की उपासना करके परस्पर मित्रपन का सम्पादन कर युद्ध में दुष्टों को जीत के राज्यलक्ष्मी को प्राप्त होकर सुखी रहना चाहिये।–**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ–४.८।**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

चतुर्वेदविद् : आमने-सामने-३८

–सत्यजित्

['चतुर्वेदविद् : आमने-सामने' नामक पुस्तक में **पं. उपेन्द्रराव जी** के **१०० प्रश्न** हैं, इन १०० प्रश्नों के आचार्या सूर्यादेवी जी द्वारा दिये गये उत्तर क्रमशः दिये गये हैं, इन उत्तरों पर **पं. उपेन्द्रराव जी की टिप्पणियां** क्रमशः दी गई हैं, अन्त में इन सब पर **आदित्यमुनि जी** द्वारा क्रमशः **सम्पादकीय निष्कर्ष** दिया गया है। स्थान-स्थान पर तीनों की टिप्पणियां भी दी गई हैं। इस लेखमाला में **आचार्य सत्यजित् जी द्वारा** पं. उपेन्द्रराव जी व आदित्यमुनि जी के प्रश्न, टिप्पणी, सम्पादकीय-निष्कर्ष व पाद-टिप्पणी की समीक्षा और प्रश्नों/आक्षेपों के उत्तर दिये जा रहे हैं।]

प्रश्न (आक्षेप) २५-क्या ऋषि लोगों ने अग्नि से बात नहीं की थी? दो ऋषि, दो देवती, प्रार्थना एक सी क्यों?

समीक्षा (सत्यजित्)-वेदमन्त्रों को ऋषिकृत मानकर किया गया गया है। महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज वेदमन्त्रों को ऋषिकृत नहीं मानते, अतः यह प्रश्न (आक्षेप) उन पर लागू होता है जो वेदमन्त्रों को ऋषिकृत मानते हैं। प्रश्न २५ की विस्तृत समीक्षा इस लेखमाला के छठे लेख में की जा चुकी है, जिसे परोपकारी सितम्बर (प्रथम) २०११ पृष्ठ २१-२२ पर देखा जा सकता है। इस समीक्षा का उत्तर या खण्डन अभी तक न तो पं. उपेन्द्रराव जी की ओर से आ पाया है, न उनके अनुयायी आदित्यमुनि जी ओर से, न ही अन्य किसी की ओर से।

प्रश्न २६-(पं. उपेन्द्रराव) कितने सहस्र वर्ष पहले अनुमानतः ऋग्वेद का निर्माण हुआ? ऋ. १०/१६३ वाले सूक्त का देवता यक्ष्मानाशन है। मन्त्र देखिए-**अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि। यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया वि वृहामि ते।** (ऋ० १०/१६३/१), **ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः०** (ऋ० १०/१६३/२), **आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो०** (ऋ० १०/१६३/३), **ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां०** (ऋ० १०/१६३/४) **मेहनाद्वनंकरणाल्लेमभ्यस्ते०** (ऋ० १०/१६३/५) **अङ्गादङ्गाल्लोम्नोलोम्नो०** (ऋ० १०/१६३/६)।

इस प्रकार शरीर के प्रत्येक अङ्ग के यक्ष्म का नाश करने का दावा वैद्य (अर्थात् विवृहा काश्यप ऋषि) कर रहा है। अथर्ववेद में तो अत्यन्त विस्तार से यक्ष्मनाशन की बातें कही गई हैं। यक्ष्मरोग की उत्पत्ति एवं विस्तार जनसंख्या की अत्यधिक-वृद्धि होने पर तथा उनके दूषित-वातावरण में (मैदानों में) वास करते रहने पर (एवं अत्यधिक-स्त्री-प्रसङ्ग से भी) होते हैं। वेदों में इस रोग का मुख्योल्लेख होने से वेदरचना के समय का अनुमान हो सकता है।

प्रश्नकर्ता पं. उपेन्द्रराव की टिप्पणी-प्रश्न के आशय को समझने में उत्तरदाता विद्वान् बार-बार विफल हो रहे हैं। उनके अनुसार वेदज्ञान की उपलब्धि हुए १,९७,२९,४९ सहस्र वर्ष हुए। परन्तु मन्त्रों में मनुष्य के अङ्गाङ्गों से सम्बन्धित-रोग का उल्लेख होने से, ऋग्वेद-निर्माण का काल उपर्युक्त-अवधि से पर्याप्त कम अनुमानित होता है, यह उत्तर है।

सम्पादकीय निष्कर्ष-यदि ऋग्वेद (१/१६४/४८) के निम्न मन्त्र को देखा जाए-**द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत। तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः।।** तो पता चलेगा कि इस मन्त्र में वर्ष में ३६० दिन होने का स्पष्ट उल्लेख है, जबकि आजकल जो पञ्चाङ्ग बन रहे हैं, उनमें वर्षमान ३६५.२४२२४०८ दिन लिया जा रहा है, जो वर्षमान किसी भी वेदमन्त्र में उल्लिखित नहीं है।

जब ११ मार्च, २०११ को जापान में भयङ्कर भूकम्प और सुनामी आया, तो वैज्ञानिकों ने पाया कि धरती अपने केन्द्र से करीब ६.५ इंच खिसक गई है। नतीजा दिन की अवधि एक सेकण्ड के दस लाखवें भाग से छोटी हो गई है। दूसरे शब्दों में वर्षमान बढ़ गया है। उनकी एक अन्य गणना के अनुसार प्रत्येक लगभग ८०० वर्षों में वर्षमान ३ सेकिण्ड तक बढ़ जाता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो ५.२४२२४०८ X २४ X ६० X ६० सेकिण्ड का अन्तर पड़ने में ५.२४२२४०८ X २४ X ६० X ६० X ८००/३ वर्ष का समय लगा होना चाहिए। इस प्रकार यह समय कुल १२,०७,८१,२२८ वर्ष होता है, जो लगभग उतना ही समय है, जितना कि प्रचलित वैवस्वत मन्वन्तर के १२,०५,२४,१११ वर्ष अब तक व्यतीत हो चुके हैं। अतः उक्त वेदमन्त्र को बने हुए भी अधिकतम इतने ही वर्ष हुए होंगे। ऋग्वेद के अन्य मन्त्रों की रचना भी इसके आसपास के काल में ही हुई होगी, जिसमें प्रश्नकर्ता द्वारा इङ्गित मन्त्र भी सम्मिलित हैं। कोई भी मानवकङ्काल इससे पूर्व का अब तक भी कहीं नहीं मिला है।

समीक्षा (सत्यजित्)-प्रश्न/आक्षेप कर्त्ता पं. उपेन्द्रराव जी ने 'यक्ष्म' शब्द को वेदमन्त्रों में देखकर इन्हें अर्वाचीन सिद्ध करने का प्रयास किया है। प्रश्न में 'यक्ष्म' शब्द से उन्होंने यक्ष्मरोग=टी.बी. (टुबर्कुलोसिस) =तपेदिक का ग्रहण

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

किया है। यह उनके यक्ष्मरोग की उत्पत्ति व उसके विस्तार के लेखन से निश्चय हो जाता है। संस्कृत में 'यक्ष्म' शब्द से तपेदिक टी.बी. का भी ग्रहण होता है, किन्तु इससे यह सिद्ध नहीं हो जाता कि इन मन्त्रों में आया 'यक्ष्म' शब्द तपेदिक-**टी.बी.** का ही वाचक है। यक्ष्म शब्द 'रोग' के वाचक, रोग के पर्यायवाची रूप में बहुत प्रयुक्त होता है। व्याधि, आमय, गद, आतङ्क, यक्ष्मा, ज्वर, विकार, रोग ये पर्यायवाची शब्दों की तरह प्रयुक्त होते हैं। इन मन्त्रों में '**यक्ष्म**' शब्द '**तपेदिक-टी.बी.**' के लिए आया है या '**रोग**' के लिए आया है, इसमें कुछ आधार या प्रमाण मिलना चाहिए, तभी वह अर्थ यहां स्वीकार किया जा सकता है।

पं. उपेन्द्रराव जी ने इन मन्त्रों में यक्ष्म शब्द के तपेदिक-टी.बी. अर्थ की पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिया है। इन छः मन्त्रों में टी.बी. का कोई लक्षण भी वर्णित नहीं हुआ है, जिससे कि उनकी बात पुष्ट हो सके। इन छः मन्त्रों में 'यक्ष्म' शब्द तो छः बार आया है, प्रत्येक मन्त्र में एक-एक बार, किन्तु 'यक्ष्म' क्या है इसका कोई विवरण-लक्षण ज्ञात नहीं होता, जिससे सिद्ध हो सके कि 'यक्ष्म' शब्द तपेदिक टी.बी. के लिए आया है। ऐसे में यक्ष्म से टी.बी. का ग्रहण करना अप्रमाणिक है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के आधार पर उन्होंने टी.बी. रोग के उत्पत्ति-विकास को आधार मानकर मन्त्र की अर्वाचीनता सिद्ध करनी चाही है। इन मन्त्रों में शरीर के विभिन्न अवयवों-अंगों का नाम लेते हुए उनसे 'यक्ष्म' को दूर करने की बात लिखी गई है। ये अवयव हैं-आंख, नाक, कान, ठोड़ी, मस्तिष्क, जिह्वा, ग्रीवा, नाड़ियां, अस्थि, अस्थि सन्धि, भुजा, कंधे, हाथ, आंत, गुदा, हृदय, गुर्दे, यकृत, प्लीहा, जंघा, घुटने, एडी, पञ्जे, नितम्ब, कटि, मूत्रेन्द्रिय, लोम व नख। इन अवयवों-अंगों के नाम से भी पता चलता है कि इन मन्त्रों में 'यक्ष्म' शब्द से टी.बी. का ग्रहण नहीं है।

तपेदिक के आधुनिक इतिहास (जिसके आधार पर पं. उपेन्द्रराव जी ने प्रश्न/आक्षेप उठाया है) में इन में से सब अवयवों/अङ्गों में तपेदिक का होना नहीं पाया गया है। इन अवयवों में **लोम (रोम) व नख** का भी नाम है। जिनमें कि मृत कोशिकाएं होती हैं, इनमें टीबी कभी नहीं होती, इनमें टीबी का होना असंभव है। विकिपीडिया के अनुसार यह रोग आमतौर पर फेफड़ों को प्रभावित करता है, किन्तु यह केन्द्रिय तन्त्रिका तन्त्र, लिम्फतन्त्र, मूत्रजनन तन्त्र, अस्थि, जोड़ व त्वचा को भी प्रभावित करता है। वेद मन्त्र में अनेक छोटे-छोटे अवयवों के नाम लिखे हैं, जिनमें टीबी बहुत कम होता है, किन्तु टीबी से सर्वाधिक प्रभावित होने वाले '**फेफड़ों**' **का नाम नहीं लिखा गया है।** यदि वेद में 'यक्ष्म' शब्द से टीबी-तपेदिक का ही ग्रहण किया गया होता है, तो यहां फेफड़ों का नाम नहीं छूट सकता था। इस प्रकार अवयवों के नामों पर ध्यान देने से भी सिद्ध होता है कि इन मन्त्रों में 'यक्ष्म' शब्द से तपेदिक का ग्रहण नहीं करना चाहिए। यह तो हुई आधुनिक अनुसन्धान के आधार पर समीक्षा की बात।

अब वेद की अन्तःसाक्षी पर भी चर्चा कर लेवें। ये मन्त्र ऋग्वेद मण्डल १० के १६३ वें सूक्त में हैं। इससे दो सूक्त पूर्व अर्थात् सूक्त १६१ के प्रथम मन्त्र की पंक्ति है-'**मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्।**' इस पंक्ति में '**यक्ष्मात्**' व '**राजयक्ष्मात्**' दो शब्द अलग-अलग आये हैं। पंक्ति का अर्थ है-'तुझे अज्ञात यक्ष्मा और राजयक्ष्मा से हवि के द्वारा मुक्त करता हूँ, जीने के लिए।' 'राजयक्ष्मा' शब्द तपेदिक-टीबी के लिए प्रसिद्ध है, आजकल इसका एक यही अर्थ लिया जाता है। पं. उपेन्द्रराव जी की शैली से भी देखें तो जब 'राजयक्ष्मात्' शब्द से तपेदिक को कह दिया और साथ में 'यक्ष्मात्' शब्द भी है, तो स्पष्ट है कि यहां 'यक्ष्मात्' शब्द से तपेदिक टीबी का ग्रहण नहीं हो सकता। यहां गोबलिवर्द न्याय लगेगा। यदि 'यक्ष्मात्' से भी तपेदिक का ग्रहण करेंगे तो अनुचित होगा। जब इस सूक्त १६१ में यक्ष्मा का अर्थ तपेदिक नहीं लिया जा सकता, तो आगे के सूक्त १६३ में आये 'यक्ष्मम्' शब्द का अर्थ भी तपेदिक नहीं लिया जा सकता।

मात्र शब्दों पर केन्द्रित रहने वाले पं. उपेन्द्रराव जी से चूक होती रहेगी, क्योंकि वे शब्दार्थ व प्रसंग आदि पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते, उन्हें तो बस खण्डन का बहाना ढूंढना होता है, दोष का संकेत मिला, संभावना लगी, तो बिना आगा-पीछा सोचे खण्डन व आक्षेप कर डालते हैं। खण्डन-आक्षेप का आवेग अधिक है, जिससे बुद्धि संतुलित नहीं रह पाती व जब बातों को देख-समझ नहीं पाते, तो पूरी संगति के बिना ही आक्षेप कर बैठते हैं। अब यदि उन्हें तपेदिक के इतिहास के आधार पर आक्षेप-खण्डन करना ही था, तो सूक्त १६१ मन्त्र १ की ऊपर लिखी पंक्ति के आधार पर करते, तो थोड़ा आधार मिलता, क्योंकि वहां 'राजयक्ष्मा' शब्द पढ़ा है, जो कि तपेदिक का वाचक है। पर उन्हें राजयक्ष्मा शब्द दिखा नहीं या सूझा नहीं या मुट्ठी में कोई कारण छुपा रखा है, पता नहीं?

वेद मन्त्र में राजयक्ष्मा शब्द देखकर या यक्ष्मा से तपेदिक का ग्रहण करके भी यह नहीं सिद्ध किया जा

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सकता कि वेद अर्वाचीन हैं। वेदों में तो सृष्टि निर्माण से पूर्व की भी चर्चा है। तो क्या उसे सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व का नहीं मान लेना चाहिए? इस प्रकार के वर्णन देखकर वेद के काल का निर्धारण नहीं किया जा सकता।

ये रोग (यक्ष्मा) या तपेदिक (राजयक्ष्मा) कुछ हजार वर्ष पूर्व अस्तित्व में आये, यह अभी का आकलन है। उपलब्ध साक्ष्य व अनुमान-संभावना के मिश्रित आधार पर ये कथन किये जाते हैं। भविष्य में नये साक्ष्य व नये अनुमानों-संभावनाओं से इस आकलन में परिवर्तन संभव है, यह वैज्ञानिक भी समझते हैं। साथ ही वैज्ञानिकों का यह दावा नहीं है कि यह रोग इस काल से पूर्व नहीं था। वे केवल यह सूचना देते हैं कि इसका यह इतिहास उपलब्ध हो रहा है। वैज्ञानिकों के कथन से पं. उपेन्द्रराव जी द्वारा यह निष्कर्ष निकालना कि कुछ हजार वर्षों से पूर्व तपेदिक नहीं था, बाद में आरम्भ हुआ है, अनुचित है। यह रोग सृष्टि के आरम्भ से भी है, इसकी संभावना को कोई मना नहीं करता, नहीं कर सकता।

ध्यान रहे, इस रोग की संभावना सृष्टि के आरम्भ से स्वीकारने का यह अर्थ नहीं कि सृष्टि के आरम्भ में यह रोग हुआ, फिर ये वेद मन्त्र बनाये गये। वेद मन्त्र तो सार्वकालिक हैं, पूर्व की सृष्टियों में भी ऐसा होता रहा है, आगे की सृष्टियों में भी ऐसा होता रहेगा, ऐसा नित्य इतिहास वेदों में होता ही है, न कि अनित्य इतिहास। सृष्टि के आरम्भ से इस रोग की संभावना का कथन मात्र यह बताने के लिए है कि पं. उपेन्द्रराव जी के अनुसार वेद का जो कुछ हजार वर्ष का काल अनुमानित किया गया, वह ठीक नहीं। यद्यपि पं. उपेन्द्रराव जी ने यहां भी मुट्ठी बन्द रखी, उन्होंने काल का उल्लेख नहीं किया, यह उनकी असुरक्षा की भावना व आत्मविश्वास के अभाव को दर्शाता है, किन्तु रोग की उत्पत्ति-विस्तार का जो कथन उन्होंने आधुनिक विज्ञान के आधार पर किया, उनके अनुसार इस रोग के जीवाणु लगभग चालीस हजार वर्ष से अस्तित्व में हैं।

पं. उपेन्द्रराव जी ने तो मुट्ठी बन्द रखी, किन्तु उनके अनुयायी आत्मविश्वासी आदित्यमुनि जी ने मुट्ठी खोल दी। ऋग्वेद (१.१६४.४८) '**द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं...**' के आधार पर उन्होंने वेदमन्त्र को बने हुए अधिकतम लगभग १२ करोड़ वर्ष की बात लिखी है। एक ओर पं. उपेन्द्रराव जी का आकलन कुछ हजार वर्षों का है, दूसरी ओर उनके अनुयायी आदित्यमुनि जी का आकलन १२ करोड़ वर्ष का, कितना अधिक अन्तर है? पं. उपेन्द्रराव जी की टिप्पणी पर संपादकीय निष्कर्ष लिखते हुए वे पं. उपेन्द्रराव जी का समर्थन कर रहे हैं या खण्डन? उन्हें विचारना चाहिए। ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज की वेद के काल विषयक मान्यता का खण्डन करने के आवेश में वे यह भूल गये कि इससे उनके तात का भी खण्डन हो रहा है, जिसकी पुष्टि वे करना चाह रहे हैं। इस प्रकार इन दोनों के परस्पर भिन्न कथन दोनों को ही परस्पर संदिग्ध बना देते हैं, फिर इन दोनों में से किस की बात ठीक है, प्रमाण है, यह संदेह बना रहेगा। फलतः दोनों अप्रमाण-अविश्वसनीय कोटि में रखे जायेंगे। ऐसे मन्तव्यों के आधार पर दयानन्द या आर्यसमाज की वेद विषयक काल मान्यता का खण्डन नहीं हो सकता।

अब पं. उपेन्द्रराव जी का शीर्षासन व रस्सी का बट देखिए। पं. उपेन्द्रराव जी ने प्रश्न में 'यक्ष्मरोग'-तपेदिक को आधार बनाया था। आचार्या सूर्या देवी जी ने इसके उत्तर में लिखा कि 'यक्ष्म' शब्द तो रोग मात्र (रोग सामान्य) का वाचक है, रोग का पर्यायवाची है, तो पं. जी को अपनी त्रुटि का ज्ञान तो हो गया, पर त्रुटि स्वीकारना उन जैसे आत्मविश्वासी के लिए असंभव सा है। आचार्या सूर्या देवी जी के उत्तर पर पं. जी ने जो टिप्पणी दी है, उसमें उन्होंने यक्ष्म (तपेदिक) का नाम नहीं दिया, मात्र 'रोग' शब्द लिखा-''परन्तु मन्त्रों में मनुष्यों के अङ्गाङ्गों से सम्बन्धित **रोग** का उल्लेख होने से.....''। इस शब्द परिवर्तन से ज्ञात हुआ कि उन्हें अपनी त्रुटि का ज्ञान हो चुका था, यह उनका शीर्षासन है, पलटी मारना है, अपनी प्रतिज्ञा को छोड़ देना है, प्रतिज्ञा संन्यास है। इसलिए उन्होंने 'यक्ष्म' शब्द को रोग अर्थ का वाचक स्वीकार करके मात्र 'रोग' शब्द लिखा। किन्तु त्रुटि को नहीं स्वीकारा और प्रस्तुति यही रखी कि इन मन्त्रों से सिद्ध है कि ऋग्वेद के निर्माण का काल बहुत कम है। यह है जली रस्सी की ऐंठ। इन मन्त्रों में 'यक्ष्म' शब्द तपेदिक-टीबी का वाचक नहीं है, इससे रस्सी तो जल गई, पर रस्सी का बट-ऐंठन नहीं गये। किन्तु जली रस्सी की ऐंठ का क्या? उसके बट का क्या? वह तो थोड़े से भार-दबाव से धूलिसात हो ही जाता है, वह बट तो नष्ट है ही।

तर्क-युक्ति की दुहाई देने वाले पं. उपेन्द्रराव जी व आदित्यमुनि जी के तर्क-युक्ति कितने निम्न स्तर के हैं, आधारहीन हैं, यह पहले भी स्पष्ट होता रहा है। संपादकीय निष्कर्ष में आदित्यमुनि जी ने ऋग्वेद के मन्त्र १.१६४.४८ को देते हुए वेद मन्त्र के काल का निर्धारण करने का जो प्रयास किया है, वेद मन्त्र को लगभग १२ करोड़ वर्ष पूर्व का लिखा है, इसकी समीक्षा परोपकारी अक्टूबर (प्रथम) २०११ पृष्ठ ३१-३२ पर दी जा चुकी है। **-ऋषि उद्यान, अजमेर।**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

अतिथि यज्ञ के होता
(१ से १५ जनवरी २०१३ तक)

१. उर्मिला उपाध्याय, अजमेर, २. अवनीश कपूर, पीतमपुरा, दिल्ली, ३. एम.एल.गोयल, अजमेर, ४. अविदिका गुप्त, दिल्ली, ५. वागीश गुप्ता, दिल्ली, ६. रंजन हांडा, पीतमपुरा, दिल्ली, ७. प्रो. आर.एस.कोठारी, जयपुर, ८. स्वास्तिकम् चेरिटेबल ट्रस्ट, महाराष्ट्र, ९. विनोद कुमार गर्ग, हरियाणा, १०. अभिषेक गुप्ता, मुम्बई, ११. सुयशा भास्कर, बैंगलौर, १२. प्रेमचन्द अग्रवाल, हरियाणा, १३. ओमप्रकाश अग्रवाल, उज्जैन।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(१ से १५ जनवरी २०१३ तक)

१. काका साहब, दिल्ली, २. वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर, ३. दाऊ दयाल व शान्ति देवी पाटीदार, जयपुर, ४. उमा श्रीवास्तव, पीतमपुरा, दिल्ली, ५. राजेन्द्र वर्मा, नई दिल्ली, ६. दीपचन्द आर्य ट्रस्ट, दिल्ली, ७. राजेश त्यागी, अजमेर, ८. कल्याण राय शर्मा, अजमेर, ९. डॉ. रघुवीर वेदालंकार, नई दिल्ली, १०. सुमेरसिंह राठौड़, जोधपुर, ११. तुलसीराम नागपाल, अजमेर, १२. कविराज हजारीलाल जांगिड़, अजमेर, १३. लक्ष्मीदेवी राजकुमारी कटारिया, अजमेर, १४. हरिनारायण सोमानी, अजमेर, १५. जगदीश सोमानी, अजमेर, १६. उम्मेदराम काबरा, अजमेर, १७. प्रेरणा महेश्वरी, अजमेर, १८. ओमप्रकाश शर्मा, अजमेर, १९. सीतादेवी वर्मा, अजमेर, २०. सुशीला, अजमेर, २१. चित्रा, अजमेर, २२. आर्यसमाज पंचकूला, हरियाणा, २३. सन्तोष अग्रवाल, पंचकूला, हरियाणा, २४. राकेश विज, पंचकूला, हरियाणा, २५. सत्यप्रकाश महेश्वरी द्वारा हरिकिशन ओमप्रकाश, दिल्ली, २६. अविनाश नांगिया, नई दिल्ली।

भूल-सुधार

परोपकारी जनवरी प्रथम २०१३ पृष्ठ २५ पर वाम पार्श्व में प्रथम-द्वितीय पंक्ति में पं. रामचन्द्र जी देहलवी का जन्म स्थान हापुड़ (उत्तर प्रदेश) छप गया है। उनका जन्म स्थान **नीमच (मध्यप्रदेश)** था। त्रुटि एवं असुविधा के लिए खेद है।

पाठकों की प्रतिक्रिया

१. 'परोपकारी' में कसाईयों से गोवंश को बचाने का समाचार पढ़ा। अतिश्लाघनीय कार्य किया गया है। इस प्रयास में जुटे सभी महानुभाव धन्यवाद के पात्र हैं। महर्षि की गोकरुणानिधि सार्थक हो रही है।

-डॉ. रघुवीर वेदालंकार, दिल्ली।

२. परोपकारी जनवरी द्वितीय २०१३ में पाठकों की प्रतिक्रियाओं में श्री बालकृष्ण जी गुप्त, प्रधान आर्यसमाज, नया बाजार लश्कर, म.प्र. का पत्र एवं आप द्वारा लिखा गया समाधान पढ़ा। कुछ सीमा तक दोनों ही सही हैं, मैंने भी दूरदर्शन पर उक्त कार्यक्रम के कई अंश देखे थे। जाने की इच्छा थी लेकिन कारणवश जा नहीं पाया था।

माननीय! परोपकारी कोई आंशिक गतिविधि की पत्रिका नहीं है वरन् संपूर्ण भारत ही नहीं संपूर्ण दुनिया के आर्यजगत्, आर्यजनों की पत्रिका है। सभी अपेक्षा करते हैं कि सार्वदेशिक का स्वरूप सार्वदेशिक रहना चाहिये। उस सम्मेलन में अनेकों निर्णय लिये गये जिससे आर्यजगत् में हर समय कुछ होता रहे, आर्यों की उपस्थिति-निरंतरता-मौजूदगी बनी रहे। यदि वहां लिये गये निर्णय वास्तविकता में हमारे कार्यशील रहने के लिये आवश्यक समझे जायें, तो परोपकारी के स्तर पर भी उनका प्रकाशन आवश्यक माना जाए।

हर परोपकारी पत्रिका में आपका **सम्पादकीय** अद्यतन विषय पर पाठक के विचारों को गलत व सही की दिशा में संतुष्ट करता है, इसके लिये हम आपके सदा ऋणी हैं। अन्य लेख भी कम महत्व के नहीं होते। सभी को साधुवाद। हम सभी के कृतज्ञ हैं, ऋणी हैं क्योंकि ये लेख किसी शोध-पत्र से कम नहीं।

-मिश्रीलाल जिन्दल,
२७२०, सोभाराम मोहल्ला, नसीराबाद, राज.।

३. पं. रामचन्द्र जी देहलवी का जन्म स्थान-मान्य श्री पं. इन्द्रजित् जी आर्य ने आदरणीय श्री ओ३म्प्रकाश जी वर्मा का पूज्य देहलवी जी विषयक रोचक संस्मरण परोपकारी के जनवरी २०१३ के अंक में दिये हैं। इसमें अनजाने से स्मृति दोष से एक भूल हुई है। इन्द्रजित् जी ने पण्डित जी का जन्म **हापुड़** में हुआ लिखा है। यह सत्य कथन नहीं है। पण्डित जी का जन्म **नीमच छावनी मध्यप्रदेश** में हुआ था। उनके कुल के कई व्यक्ति आज भी नीमच में रहते हैं। मैंने पण्डित जी पर अपने बड़े ग्रन्थ में इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

-राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

पाठकों के विचार

आर्यसमाज ही सर्वश्रेष्ठ समाज है-
मनसा-वाचा-कर्मणा होकर सत्याधार,
ऋषि दयानन्द ने किया बड़ा जगत् उपकार।

महर्षि दयानन्द सरस्वती एक युगद्रष्टा-युगस्रष्टा महान् योगी तपस्वी थे, परन्तु मनुष्य मात्र की उन्नति और समाज सुधार के लिए ही जैसे उनका जन्म हुआ था। मनुष्य की उन्नति के लिए उन्होंने सन् १८७५ ई. में 'आर्यसमाज' नाम से एक संगठन खड़ा किया। देश के सभी नगरों में आर्यसमाज की स्थापना के लिए अभियान चलाये गये, जिसके परिणाम स्वरूप आज देश के नगरों में कई-कई आर्यसमाजें स्थापित हो गयी हैं। देश के बाहर भी अनेक देशों में आर्यसमाजें बनकर वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार कर रही हैं। मेरठ जैसे नगर में भी वर्तमान में २२ आर्यसमाजें हैं। इसी प्रकार से अन्य नगरों में भी आर्यसमाजों की काफी अच्छी संख्याएँ हैं और भारत की राजधानी दिल्ली में तो कई सौ आर्यसमाजें स्थापित हैं। बहुत सारे गुरुकुल हैं। प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाएँ हैं, सार्वदेशिक आर्य सभाएँ हैं। इस प्रकार से महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज के स्वप्नों को साकार करने के लिए, उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में आर्यसमाजों का अच्छा जाल सा फैल चुका है।

सभी आर्यसमाजों के नियम व उद्देश्य महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बनाये गये और बताये गये अनुसार ही दस नियम बिना किसी भेदभाव के लागू हैं। परन्तु देश या प्रदेश स्तर पर महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज की मूल भावना के अनुसार कोई जनप्रतिनिधि लोकसभा सदस्य या राज्य सभा सदस्य अथवा विधानसभा सदस्य ऐसा नहीं है, जो उनकी बात को सरकार के सम्मुख उठा सके। लोकसभा या विधानसभा की बात को छोड़ देते हैं। एक नगर की सभी आर्यसमाजों में परस्पर मतैक्य नहीं है। इसलिए आर्यसमाज की विचारधारा को प्रादेशिक या राष्ट्रीय स्तर पर उठाने वाला कोई नहीं है। स्वयं आर्यसमाजों में इतना विघटन है कि एक आर्यसमाज के सभी सदस्य कभी किसी भी बात पर मतैक्य नहीं कर पाते। क्योंकि सर्वत्र राजनीति घुस गयी है। इस देश की राजनीति बहुत ही निकृष्ट स्तर की हो गयी है। जिसका सुधार होना सम्भव दिखाई नहीं देता। आर्यसमाज जैसी पवित्र संस्थाएँ भी इससे अछूती नहीं रह गयीं। शेष समाज का तो कहना ही क्या? 'यथा राजा तथा प्रजा' यह कहने में आता रहा है। जब राजा ही भ्रष्टाचार में आकंठ डूबा हुआ हो, वहाँ प्रजा का दु:खी होना स्वाभाविक है। आज अपने देश में अराजकता, अनीति, अव्यवस्था आदि अनेक बुराईयाँ घर कर गयी हैं। इनका सुधार आर्यसमाज की व्यवस्था से ही सम्भव है। **-एक पाठक।**

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

संस्था-समाचार

-०१ से १५ जनवरी तक

''ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः'' महर्षि कपिल के बताये इस मार्ग का अनुसरण करते हुए ऋषि उद्यान में सतत् अध्यात्म-ज्ञान की वर्षा हो रही है। प्रवचन के अन्त में साधकों की आध्यात्मिक जिज्ञासाओं का समाधान भी किया जाता है। गुरुकुल ऋषि उद्यान के ही छात्र ब्र. रविशंकर जी ने जिज्ञासा प्रकट की कि 'जब तक मुक्ति नहीं हो जाती, तब तक मनुष्य के संस्कार उसके चित्त में रहते ही हैं, और वे समय आने पर उभरते भी हैं। यदि हमारे चित्त में अच्छे संस्कार हैं, तो जब वे उभरेंगे तब हम स्वतः ही अध्यात्म की ओर बढ़ेंगे, अभी अधिक परिश्रम करने की क्या आवश्यकता है?'

समाधान (आचार्य सत्यजित् जी)-ये सिद्धान्त बिलकुल सही है कि चित्त में संस्कारों का संचय होता रहता है और जब वे उभरते हैं, तो उनके अनुसार मानसिक स्थिति भी बदलती है। परन्तु संस्कारों के भरोसे हम संतुष्ट होकर बैठ जायें और परिश्रम छोड़ दें, ऐसा नहीं करना है, क्योंकि संस्कार स्वयं नहीं उभरते। उनके उभरने में कई कारण होते हैं। व्यास जी ने संस्कारों के उभरने के ६ कारण बताये हैं-धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, अवैराग्य। ज्ञान और अज्ञान से संस्कार उभरते हैं, ये हम जानते हैं। वैराग्य, अवैराग्य से संस्कार उभरते हैं, ये भी हमें पता है, परन्तु दो कारण और हैं-धर्म और अधर्म। अर्थात् हमने जिस प्रकार के कर्म किये हैं-धर्म या अधर्म, उनका फल देने के लिये ईश्वर वैसे ही संस्कारों को उभार देता है। यदि बुरे कर्मों का फल मिलना हो तो व्यक्ति ना चाहते हुए भी गलती करता है, और हानि उठाता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति वर्षों से यज्ञ-सत्संग आदि में जाकर अच्छी स्थिति बनाता है, परन्तु कोई व्यक्ति कुछ दिनों में ही इतनी अच्छी स्थिति बना लेता है, जो कि दूसरा व्यक्ति वर्षों के प्रयत्न से भी नहीं बना पाता। इसलिए धर्म (पुण्य)-ज्ञान-वैराग्य के लिए सदा प्रयत्न करते रहना चाहिए व अधर्म (पाप)-अज्ञान-अवैराग्य से सदैव बचते रहना चाहिए, तभी हम वाञ्छित शुभ संस्कारों को तीव्रता से उभारे रख सकते हैं।

वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते-प्रातः यज्ञोपरान्त प्रवचन में परोपकारिणी सभा के कार्यकारी प्रधान **डॉ. धर्मवीर जी** ने पुरुष सूक्त के ''सहस्रशीर्षा: पुरुषः'' मन्त्र की व्याख्या की। आपने कहा कि सामान्यतया इस मन्त्र को देखकर लोग सोचते हैं कि ईश्वर हजार सिर, हजार आंख, हजार पैर वाला है, परन्तु यहां 'सहस्र' शब्द हजार के लिये ना होकर असंख्यवाची है। जैसे व्यवहार में हम प्रयोग करते हैं ''हजारों साल पहले की घटना है'' यहां पर हजार शब्द पूरे एक हजार (१०००) के लिये नहीं है, उसका अर्थ है-'बहुत वर्ष पहले'। इसी प्रकार 'सहस्रशीर्षा:' का अर्थ है-'असंख्य सिरों के सामर्थ्य वाला'। इस मन्त्र में शीर्ष (सिर), अक्ष (आंख), पात् (पैर) आदि शब्द भी उन-उन इन्द्रियों के गुण-कार्य के वाचक हैं। सहस्रशीर्षा: अर्थात् अनन्त ज्ञानयुक्त, सहस्राक्षः अर्थात् सब कुछ देखने वाला, सहस्रपात् अर्थात् सब जगह पहुँचा हुआ, सर्वत्र विद्यमान।

मन्त्र के अगले चरण ''स भूमिं सर्वतः स्पृत्वाऽ-त्यतिष्ठत्'' की व्याख्या करते हुये उन्होंने कहा कि वह परमात्मा भूमि को सब ओर से छुए हुए विद्यमान है, अर्थात् सब जगह, हर कण में विद्यमान होकर भी इतना स्वाभाविक है कि प्रकृति के या हमारे किसी भी कार्य में बाधा नहीं डालता। यदि जल हमारे चारों ओर हो तो वह हमारे कार्य में बाधा उत्पन्न करेगा, परन्तु ईश्वर व्यापक होते हुये भी किसी क्रिया में रुकावट नहीं डालता। क्योंकि जीव स्वतन्त्र है, इसलिये ईश्वर जीव के किसी कार्य में हस्तक्षेप नहीं करता। शरीर में जीवात्मा भी रहती है और परमात्मा भी रहता है, लेकिन जब तक शरीर में जीवात्मा रहता है, तब तक उसमें आत्मा के ही नियम चलते हैं। आत्मा के लक्षण हैं-सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान। ये सभी लक्षण शरीर में भी दिखाई देते हैं। जैसे ही आत्मा शरीर से निकला, उसी समय से उसमें ईश्वर के नियमानुसार सड़ने, गलने की क्रियाएं प्रारम्भ हो जाती हैं।

उपदेश्य उपदेष्टृत्वात् तत् सिद्धिः इतरथान्धपरम्परा-उपदेशकों के उपदेश करने से ही सत्यासत्य का निर्णय होता है, अन्यथा अन्धपरम्परा चल पड़ती है। योग-दर्शन के सूत्र ''एतेन भूतेन्द्रियेषु०'' की व्याख्या करते हुए **आचार्य सत्यजित् जी** ने सैद्धान्तिक चर्चा करते हुए बताया कि नित्य तत्व तीन हैं-ईश्वर, जीव, प्रकृति। अनेक व्यक्ति नित्य की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि जिसमें कभी कोई परिवर्तन नहीं होता, वह नित्य होता है। यदि इस परिभाषा को माना जाये तो

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

जीव और प्रकृति नित्य नहीं कहलायेंगे, क्योंकि प्रकृति के मूल कणों (सत्व, रज, तम) में परिवर्तन होकर ही यह संसार बना है। जीवात्मा में भी सुख, दु:ख, इच्छा, राग, द्वेष आदि परिवर्तन होते ही रहते हैं। अत: नित्य की अटल परिभाषा यह होगी कि ''जो कभी उत्पन्न नहीं होता और जिसका कभी नाश नहीं होता, वह नित्य होता है।'' इसी प्रकार ईश्वर को सर्वज्ञ सिद्ध करने के लिये हेतु दिया जाता है कि जिसके ज्ञान में परिवर्तन (घटना-बढ़ना) नहीं होता, वह सर्वज्ञ है। यह हेतु इसलिये दिया जाता है कि यदि ईश्वर के ज्ञान में घटना-बढ़ना मानेंगे तो वह सर्वज्ञ पूर्ण ज्ञानवान् कैसे होगा। वस्तुत: हम जो नये कर्म करते हैं, उनका पहले ईश्वर को ज्ञान नहीं था, करने के बाद ज्ञान हुआ। अत: उसके ज्ञान में पहले से वृद्धि हुई। यदि यह मानें कि हम जो भी करते हैं या करेंगे, वह ईश्वर को पहले से ही पता होता है, तो जीवात्मा के कर्म करने की स्वतन्त्रता खण्डित होती है। ईश्वर हमें सतत देखता है, हमारे कुछ करते ही उसे उसका पता चल जाता है। ईश्वर के ज्ञान में ऐसी वृद्धि मानने से उसकी सर्वज्ञता खण्डित नहीं होती, वह तो सर्वज्ञ ही है, जो जैसा है उसको वह पूरी तरह वैसा ही जानता है।

शस्त्रेण रक्षिते देशे शास्त्रचर्चा प्रवर्तते-हाल ही में मुस्लिम विधायक अकबरुद्दीन उवैसी द्वारा दिये गये भड़काऊ भाषण पर चर्चा करते हुये **श्री सत्येन्द्र आर्य जी** (मेरठ) ने ब्रह्मचारियों के साथ हुयी चर्चा में कहा कि हिन्दू (आर्य) जाति में बिना किसी के किये ही विघटन हो रहा है। सभी सम्प्रदायों के लोग अपने को अल्पसंख्यक घोषित कराने के लिये गुहार लगाते रहते हैं, क्योंकि उसे उन्हें ये लाभ मिलता है कि अल्पसंख्यकों की शिक्षण संस्थाओं को सरकार अनुदान तो देती है, पर उनमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती। विघटन का एक और कारण है कि हमारे गौरवशाली इतिहास को विकृत किया गया। नेहरु के समय में भारत का ऐसा इतिहास लिखा गया, जिसका प्रारम्भ ही मक्का-मदीना की प्रशंसा से किया गया और भारतीय संस्कृति की निन्दा की गयी। अंग्रेजों ने पहले ही १८५७ की क्रान्ति को 'सैनिक विद्रोह' घोषित किया हुआ था, परन्तु वीर सावरकर ने ''१८५७ का भारतीय स्वातन्त्र्य समर'' पुस्तक लिखकर उसका खण्डन किया। उसके बाद और भी कई विद्वानों ने भारत की गौरव-गाथा को लिखा। पुरुषोत्तम नागेश ओक ने पुस्तक लिखी- ''ताजमहल का वास्तविक निर्माता कौन?'' उस पर मुकदमा चला, परन्तु नागेश जी ने कोर्ट में चुनौती दी कि ताजमहल की जिन दीवारों पर आयतें लिखी हैं, उनका प्लास्टर उतरवाओ, उनके नीचे गीता के श्लोक लिखे मिलेंगे। अन्त में वे केस जीते, और वह पुस्तक छपी।

पूर्णा: सन्तु यज्ञमानस्य कामा:-१४ जनवरी २०१३ को परोपकारिणी सभा के **संयुक्त मन्त्री डॉ. दिनेश शर्मा** जी के सुपुत्र **डॉ. मृत्युञ्जय शर्मा** जी का जन्म-दिवस ऋषि उद्यान की यज्ञ वेदी पर मनाया गया। डॉ. मृत्युञ्जय जी ने सपत्नीक यज्ञ में भाग लिया। आप एक उत्साही, लग्नशील, राष्ट्रभक्त युवक हैं। किसी भी रचनात्मक कार्य को करने में आप सदैव आगे रहते हैं और दूसरों को भी प्रेरणा देते रहते हैं। आपके इस उत्साह की सभा के कार्यकारी-प्रधान **डॉ. धर्मवीर** जी ने प्रशंसा की और कहा कि ये उत्साह सदैव बने रहना चाहिये। यज्ञ के पश्चात् प्रधान जी ने आशीर्वचन कहे और वहां पर उपस्थित सभी महानुभावों-आचार्यों ने पुष्प वर्षा करके यज्ञमान को आशीर्वाद दिया। संयोग से इस दिन मकर संक्रान्ति का पर्व भी था, जिसके विषय में प्रधान जी ने प्रकाश डाला।

सभा के कार्यकारी-प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम-५ से १८ जनवरी तक ऋषि उद्यान में यजुर्वेद के पुरुष-सूक्त पर व्याख्यान माला। इसी बीच अजमेर के अन्य स्थानों पर भी जाकर प्रचार-प्रसार किया, जिसमें ११ जनवरी को कन्या विद्यालय रामनगर में व्याख्यान दिया। वहां पहले ब्र. रामदयाल जी ने देवयज्ञ कराया, तदुपरान्त प्रधान जी का प्रवचन हुआ। १२ जनवरी को रींगस, जिला-सीकर में विवेकानन्द जयन्ति पर व्याख्यान। उसी दिन मुकेश जी के घर पर पारिवारिक सत्संग का आयोजन किया गया, जिसमें नौबतराम जी का भजन हुआ, पश्चात् प्रधान जी का व्याख्यान।

-ब्र. प्रभाकर

किसी मनुष्य को परमेश्वर की उपासना के विना शरीर, आत्मा और प्रजा का दु:ख दूर होकर सुख नहीं हो सकता, इससे उसकी स्तुति-प्रार्थना और उपासना आदि के करने और ओषधियों के सेवन से शरीर, आत्मा, पुत्र, मित्र और पशु आदि के दु:खों को यत्न से निवृत्त करके सुखों को सिद्ध करना उचित है।-**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-३.५९।**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आर्यजगत् के समाचार

१. आर्यसमाज मगरा पूँजला जोधपुर में २३ दिसम्बर को स्वामी **श्रद्धानन्द बलिदान दिवस** पर यज्ञ, भजन एवं प्रवचन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आचार्य विमल शास्त्री के ब्रह्मत्व में यज्ञ किया गया। तदुपरान्त अपने उद्‌बोधन में उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के उपदेशों से प्रभावित होकर स्वामी श्रद्धानन्द ने वैदिक संस्कृति के रक्षणार्थ प्राचीन एवं वर्तमान शिक्षा प्रणाली का समन्वय कर गुरुकुल कांगड़ी, इन्द्रप्रस्थ एवं कुरुक्षेत्र आदि गुरुकुलों की स्थापना की। स्वामी श्रद्धानन्द शिक्षा शास्त्री, राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक, निर्भीक एवं कर्मयोगी महापुरुष थे। उन्होंने शुद्धि आन्दोलन चलाया था।

२. आर्य केन्द्रीय सभा गुड़गाँव का सराहनीय प्रयास– ''आर्यसमाज को नेताओं की नहीं, सेवकों की आवश्यकता है'' यह शब्द थे स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती जी के। इन शब्दों को साकार रूप देने के लिए सेवा भावना को प्रमुख रखते हुए आर्य केन्द्रीय सभा गुड़गाँव एवं आर्यसमाज नई कॉलोनी गुड़गाँव के संयुक्त तत्वावधान में स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती जी के ८६वें बलिदान समारोह को **शोभा यात्रा** तथा **श्रद्धांजलि समारोह** के अतिरिक्त **सेवा दिवस** के रूप में समाज के पीड़ित लोगों की सहायतार्थ एक विशेष कार्यक्रम २२ दिसम्बर २०१२ को दशहरा ग्राउण्ड नई कॉलोनी, गुड़गांव में सम्पन्न किया गया।

गुड़गाँव के कुछ दानवीर एवं दवाई उद्योग से जुड़े कुछ निष्ठावान् एवं समर्पित व्यक्तियों ने इस समारोह को सेवा दिवस के रूप में विकलांगों को १० ट्राई साईकिल, बहंगियाँ, व्हील चेयर, नेत्रहीनों को गणित सीखने की लोहे कीलियाँ, अन्ध विद्यालय बहरामपुर को बिजली एवं प्लम्बर का सामान एवं ब्रेल भाषा में सत्यार्थप्रकाश आदि लगभग ५३०००/– रुपये का सामान एवं अतिनिर्धन लोगों को उत्तम कोटि की १०० रजाईयाँ प्रदान कर मनाया। यह कार्य आर्य केन्द्रीय सभा गुड़गाँव की ओर से पहली बार किया गया। यह कार्य २२ दिसम्बर २०१२ को समारोह में यज्ञ एवं भजनोपदेश के उपरान्त सम्पन्न हुआ।

३. वैदिक संस्कृति उत्थान न्यास द्वारा आर्यसमाज खेड़ा अफगान–सहारनपुर में **स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान** दिवस बेसहारा लोगों को सर्द हवाओं से बचाने के लिए कम्बल वितरण कर मनाया गया है। सर्वप्रथम यज्ञ किया गया। इस अवसर पर वैदिक विद्वान् श्री जिनेश्वर प्रसाद का प्रवचन हुआ।

४. दिव्य वैदिक सत्संग मण्डल जयपुर द्वारा मानसरोवर सैक्टर ५, जोन–५६ के चित्रकूट पार्क में २.३० घण्टे तक मातृशक्ति सम्मान रक्षार्थ यज्ञ व भजन–सन्ध्या सम्पन्न हुई। कार्यक्रम संयोजक एवं सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् प्रदेशाध्यक्ष यशपाल 'यश' के आह्वान पर सैकड़ों नर–नारियों ने दिल्ली सामूहिक बलात्कार से उपजी दु:खद स्थिति पर प्रायश्चित्त व श्रद्धाञ्जलि स्वरूप ३१ दिसम्बर दोपहर १२.०० बजे से १ जनवरी प्रात: ६.०० बजे तक निराहार रहने के संकल्प सहित यज्ञ में आहुतियां दीं। यश ने इस बार नववर्ष की मौज–मस्ती को त्याग कर आत्मचिन्तन की आवश्यकता जताई। भजन–सन्ध्या में मथुरा से आये पं. उदयवीर व अमीचन्द ने नारी सम्मान रक्षा हेतु जोशीले भजन व गीतों से उपदेश किया।

५. ऋषिभक्त दम्पति श्री सुशील–ब्रह्मा मित्तल ने अपने पुत्र–पौत्रादिकों के सान्निध्य में २५ से ३०.१२.२०१२ तक **अथर्ववेद पारायण यज्ञ** का आयोजन किया। यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. रामपाल 'विद्याभास्कर' के निर्देशन में वेदपाठ श्रीमती सुमित्रा आर्या व श्रुति आर्या ने किया। मथुरा के आमंत्रित भजनोपदेशक उदयवीर सिंह ने सुमधुर प्रभावी भजनों से समाँ बाँधा। स्थानीय श्रीमती सुधा मित्तल, श्रीमती श्रुति, पं. यादराम मेहरा परिवार ने भी भजन प्रस्तुतियाँ दीं। यद्यपि यज्ञायोजन जयपुर के बरकतनगर के बाँके बिहारी मंदिर में था, तथापि पौराणिक जगत् में भी अच्छा संदेश गया।

६. रविवार २३.१२.१२ को **आर्यसमाज वैशालीनगर जयपुर** ने **वार्षिकोत्सव** के साथ **श्रद्धानन्द बलिदान दिवस** मनाया। समारोह के मुख्य अतिथि राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान सत्यव्रत सामवेदी ने स्वामी जी के शैक्षणिक राजनैतिक एवं नारी उत्थान के कार्यक्रमों की विशेष चर्चा की। विशिष्ट अतिथि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् राजस्थान के प्रदेशाध्यक्ष यशपाल यश ने दिल्ली में हुए रेपकाण्ड को 'राष्ट्रीय शर्म' बताते हुए कहा कि इस कलंक को मिटाने के लिए युवा पीढ़ी को कमर कसनी होगी।

समारोह के मुख्यवक्ता डॉ. कृष्णपाल सिंह ने वैदिक मान्यताओं पर सारगर्भित चिन्तन प्रस्तुत किया। समारोह की अध्यक्षता राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश एस.एस.कोठारी कर रहे थे। इस अवसर पर अमेरिका से आए

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

संगीताचार्य डॉ. रवि ने तो भजन प्रस्तुत किया ही, पं. यादराम, मेहरा परिवार, श्रुति शास्त्री एवं जवाहर लाल बधवा की भी प्रस्तुतियों ने मधुरता बिखेरी।

७. आर्यसमाज राजगढ़ का **त्रिदिवसीय वार्षिकोत्सव यजुर्वेद पारायण यज्ञ** के साथ दिनाङ्क २८ से ३० दिसम्बर २०१२ तक हर्षोल्लास से राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री अमर मुनि जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। यजुर्वेद पारायण यज्ञ श्री विश्वपाल जी, आचार्य आर्ष कन्या गुरुकुल दाधिया, मुण्डावर (अलवर) के आचार्यत्व में सम्पन्न हुआ। इसी 'गुरुकुल' की चार विदुषी छात्राओं (कविता, सीमा, मंजू, चंचल) ने सोत्कण्ठ, सस्वर, सुमधुर, सुस्पष्ट, विशुद्ध, नैष्ठिक एवं ओजस्वी वाणी में वेद मन्त्रों का धारा प्रवाह-एक लय पाठ करते हुए कस्बे के वातावरण को सुरम्य-सुरभित बना दिया। आचार्य महादेव ने अन्तराल से इन्हीं विशेषणों के साथ वेद वाचन करते हुए वेद के महत्त्वपूर्ण मन्त्रों की सुन्दर, सरल, सरस व उत्कृष्ट लौकिक व आध्यात्मिक व्याख्या की।

श्री शिवकुमार जी आचार्य, गुरुकुल कोलायत (बीकानेर) व श्री अमर मुनि जी (अलवर) ने वेद व्याख्यान एवं आर्यसमाज की महत्ता पर प्रवचन दिए। श्री जगदीश जी आर्य जखराना प्रधान अलवर जिला आर्य समाज एवं मन्त्री श्री हरिपाल जी शास्त्री ने भी उद्बोधित किया। श्री हरिसिंह जी, तिनकीरूड़ी (अलवर) ने ईश भक्ति एवं देश भक्ति के गीतों को प्रस्तुत किया। श्री नरदेव जी आर्य भरतपुर ने हृदय स्पर्शी कथाओं के साथ भजनोपदेश किया। इस उत्सव में प्रतिदिन सैकड़ों एवं अन्तिम दिन हजारों की उपस्थिति रही। गुरुकुल खेड़ली (अलवर) के छात्रों ने वेदपाठ, आसन-व्यायाम एवं देश भक्ति के गीतों की प्रस्तुति दी। स्वामी देवानन्द जी सरस्वती, जो इस आर्यसमाज के प्रत्येक वार्षिकोत्सव की मेरूदण्ड रहते आये हैं, उनको इस अवसर पर विशिष्ट रूप से सम्मानित किया गया।

८. आर्यसमाज लल्लापुर वाराणसी के ७६वें **वार्षिकोत्सव** पर चार दिवसीय **बृहद् वैदिक समारोह** आयोजित किया गया। २०.१२.२०१२ को आर्यसमाज मंदिर लल्लपुर में **वैदिक यज्ञ** एवं **यज्ञोपवीत संस्कार** का आयोजन किया गया। अपराह्न २.०० बजे से **नगर कीर्तन** निकाला गया, जो नगर के विभिन्न मार्गों से होते हुए आर्यसमाज लल्लापुर आकर समाप्त हुआ। शेष ३ दिनों के कार्यक्रम सीताराम कुंज, चेतगंज में हुए।

२१ दिसम्बर को प्रात:कालीन सत्र में प्रियंका शास्त्री के पौरोहित्य में पाणिनि कन्या महाविद्यालय की ब्रह्मचारिणियों ने वैदिक यज्ञ सम्पन्न कराया। पं. सुरेशचन्द्र जोशी ने ध्वजारोहण व प्रवचन किया। राजेन्द्र योगी सरस्वती ने उद्बोधित किया। सत्यमुनि वानप्रस्थी, अमरसिंह वाचस्पति ने भजन के माध्यम से आर्यसमाज के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। नयी दिल्ली में महिला के साथ सामूहिक दुष्कर्म के विरोध में महिलाओं ने मार्च निकालकर अपराधियों को फांसी की सजा देने की मांग की।

२३ दिसम्बर को मध्याह्न सत्र में 'क्या कहें आर्य या हिन्दू' विषय पर आयोजित वैदिक परिचर्चा में स्वामी राजेन्द्र योगी सरस्वती ने कहा कि वैदिक वाङ्मय में 'हिन्दू' शब्द कहीं नहीं है। पं. सुरेशचन्द्र जोशी ने कहा कि आर्य शब्द गुणवाची है। आचार्य शिवदत्त पांडेय ने कहा कि ऋषि-मुनियों और हमारे पूर्वजों ने हमारा नाम हिन्दू नहीं रखा। सत्यमुनि वानप्रस्थी, श्रीमती रुक्मिणी आर्या एवं अमरसिंह वाचस्पति ने गीत के माध्यम से 'आर्य' शब्द पर प्रकाश डाला।

९. आर्यसमाज रामामण्डी (पंजाब)-स्वामी श्रद्धानन्द दिवस मनाया गया-पुरोहित दीनानाथ जी आर्य ने वैदिक रीति से यज्ञ रचाया। कोशलपुरी आर्य ने स्वामी जी के जीवन पर प्रकाश डाला। बहन वेद कुमारी आर्या ने सुन्दर ढंग से भजन कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

१०. आर्यसमाज सेक्टर-६, भिलाई का **त्रिदिवसीय ५३वाँ वार्षिकोत्सव एवं अथर्ववेद महायज्ञ का** कार्यक्रम २१, २२ एवं २३ दिसम्बर १२ को सम्पन्न हुआ। इसकी पूर्व संध्या पर भजन एवं प्रवचन का कार्यक्रम पुराना नेहरु नगर क्लब में भी आयोजित किया गया था। इसमें गुरुकुल आमसेना, उड़ीसा के संस्थापक स्वामी धर्मानन्द सरस्वती, बिजनौर (उ.प्र.) के भजनोपदेशक पं. नरेशदत्त जी, पाणिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी की प्राचार्या डॉ. प्रीति विमर्शिनी एवं छत्तीसगढ़ प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान आचार्य अंशुदेव पधारे। कार्यक्रम का उद्घाटन २१ दिसम्बर १२ को झण्डा फहराकर किया गया। रोज प्रात: हवन, भजन और प्रवचन तथा सायं भजन, प्रवचन उपरोक्त विद्वानों द्वारा किए गए। प्रथम दिवस में दोपहर में अंतरशालेय भाषण एवं क्विज प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें १२ टीमों ने भाग लिया। विजयी टीमों को पुरस्कृत किया गया। अंतिम दिन अथर्ववेद महायज्ञ की पूर्णाहुति दी गई। इसमें करीब १२०० लोगों ने भाग लिया। ऋषि लंगर के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

११. आर्यसमाज बारां का वार्षिकोत्सव कार्यक्रम १४ से १६ दिसम्बर तक मनाया गया। इसमें प्रात: एवं सायं दोनों समय देवयज्ञ का आयोजन किया गया। प्रतिदिन यज्ञ के उपरान्त सत्संग में जींद, हरियाणा से पधारे वैदिक विद्वान् प्रा. ओमकुमार आर्य ने अपने वैदिक प्रवचनों से लाभान्वित किया, साथ ही दिल्ली से पधारीं वैदिक विदुषी बहन सुदेशा संगीताचार्या ने अपने

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

भजनों से सबको अह्लादित किया। कोटा से पधारे आचार्य अग्निमित्र शास्त्री ने उपनिषदों की चर्चा की।

१२. आर्यसमाज तलवण्डी, कोटा का तीन दिवसीय **वार्षिकोत्सव** २२ दिसम्बर से २४ दिसम्बर तक मनाया गया। इस अवसर पर प्रतिदिन प्रातः तथा सायं दोनों समय पं. क्षेत्रपाल आर्य के पौरोहित्य में देवयज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ के उपरान्त सत्संग में वैदिक विद्वान् प्रो. रामनारायण शास्त्री, पं. मदनमोहन आर्य, वैदिक प्रवक्ता अग्निमित्र शास्त्री तथा पं. वृद्धिचन्द शास्त्री ने अपने प्रवचनों से आर्य महिलाओं व पुरुषों को लाभान्वित किया। साथ ही भजनोपदेशक श्री सतीश सुमन ने अपने सुमधुर भजनों से उपस्थित समूह को आनन्दित किया।

इस अवसर पर २३ दिसम्बर को अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस मनाया गया। इस अवसर पर आर्यसमाज तलवण्डी की ओर से आर्यवीर दल के संगठन को मजबूत करने के लिए आर्यवीर दल राजस्थान के संरक्षक श्री मदनमोहन आर्य को एक लाख रुपये की अनुदान राशि प्रदान की गई। वार्षिकोत्सव के अन्तर्गत श्री लालचन्द आर्य के आर्थिक सहयोग से महर्षि दयानन्द का अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश मात्र दस रुपये के मूल्य पर उपलब्ध कराया गया। उपस्थित लोगों ने सैकड़ों की संख्या में सत्यार्थप्रकाश खरीदे।

१३. आर्यसमाज खेड़ा अफगान (सहारनपुर) का **वार्षिकोत्सव** १६, १७ फरवरी २०१३ को धूमधाम से मनाया जायेगा। उत्सव में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के प्रधान श्रीमान् देवेन्द्रपाल वर्मा आर्य (मुजफ्फर नगर), आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी बिजनौर, आचार्य रणवीर शास्त्री नकुड, श्री ओमप्रकाश वर्मा आर्य भजनोपदेशक सहारनपुर आदि वैदिक विद्वान् पधार रहे हैं। १७ फरवरी को वैदिक संस्कृति ज्ञान वर्धिनि प्रतियोगिता का परिणाम एवं परितोषिक वितरण किया जायेगा। वैदिक संस्कृति उत्थान न्यास द्वारा क्षेत्र के गोरक्षकों को सम्मानित किया जायेगा।

१४. आर्यसमाज अन्धेरी (प.) मुंबई का २६वां **वार्षिकोत्सव** सम्पन्न हुआ। इसमें चतुर्वेद शतक २१ कुण्डीय महायज्ञ २० से २३ दिसम्बर २०१२ तक आचार्य अखिलेश्वर जी के ब्रह्मत्व में धूम-धाम से सम्पन्न हुआ। आर्ष कन्या गुरुकुल चोटीपुरा की कन्याओं ने वेदपाठ से वातावरण को यज्ञमय बना दिया। प्रतिदिन प्रातः सायं पं. कंचन कुमार जी ने अपनी भजन मण्डली के साथ भजन प्रस्तुत कर वातावरण को भक्तिमय बना दिया। २३ दिसम्बर २०१२ को प्रातः १०.०० बजे यज्ञ की पूर्णाहुति के पश्चात् मुंबई की समस्त आर्यसमाजों की ओर से आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में अमर शहीद स्वामी **श्रद्धानन्द** जी का ८७वां **बलिदान दिवस** मनाया गया।

१५. २६ व २७ दिसम्बर २०१२ को दिल्ली के **गुरुकुल खेड़ा-खुर्द** में स्वामी **श्रद्धानन्द** जी के **बलिदान दिवस** की स्मृति में **अखिल भारतीय संस्कृत व्याकरण व वैदिक सिद्धान्त की प्रतियोगिता** आयोजित की गई, जिसमें दिल्ली, हरियाणा, उ.प्र., उत्तराखण्ड, म.प्र. आदि प्रान्तों के गुरुकुलों के छात्रों ने भाग लिया। गुरुकुल खेड़ा-खुर्द के छात्र ब्र. संजय ने धातुवृत्ति में प्रथम व काशिका में द्वितीय स्थान प्राप्त किया तथा पाणिनी महाविद्यालय रेवली के छात्र अरुण ने काशिका में प्रथम व धातुवृत्ति में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इसी प्रकार अष्टाध्यायी कण्ठस्थीकरण में गुरुकुल कुरुक्षेत्र के छात्र ब्र. अनिल प्रथम व रेवली गुरुकुल के छात्र ब्र. विद्यानंद ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। लाला गणेशदास जी आर्य ने प्रसन्न होकर गुरुकुल खेड़ा-खुर्द के पुस्तकालय के लिए २२०००/- रु. की पुस्तकें भेंट करने की घोषणा की। लाला जी ने प्रतियोगी छात्रों को भी ३५०० रु. की पुस्तकें पुरस्कार में दीं। इस प्रतियोगिता में आचार्य धर्मवीर जी व महात्मा रामशरण जी का विशेष योगदान रहा।

१६. आर्यसमाज स्वाहेड़ी का ३१वाँ **वार्षिकोत्सव** दिनांक १८ से २५ फरवरी २०१३ तक चतुर्वेद पारायण महायज्ञ द्वारा मनाया जा रहा है। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य अरविन्द शास्त्री योगाचार्य बरनावा एवं वेदपाठ संस्कृत महाविद्यालय बरनावा (बागपत) मेरठ के ब्रह्मचारियों द्वारा सम्पन्न होगा।

१७. आर्यसमाज गंगापुर सिटी की ओर से विजय पैलेस में दिनांक २९ दिसम्बर से ४ जनवरी २०१३ तक **सामवेद पारायण महायज्ञ** सम्पन्न हुआ। यह यज्ञ आचार्या प्रियंवदा वेद भारती ने करवाया व प्रवचन भी दिये। गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों ने वेदपाठ के अतिरिक्त भजन भी प्रस्तुत किए। इस दौरान नवीन आर्यसमाज मन्दिर, भगवती नगर की भूमि प्रदान करने वाले और भवन निर्माण में दान देने वाले भामाशाहों का सम्मान किया गया। कार्यक्रम संयोजक रमेशचन्द आर्य (किशोरपुर वाले) व आर्यसमाज के प्रधान गोरधनलाल गर्ग ने अतिथियों व कार्यकर्ताओं का धन्यवाद ज्ञापित किया।

१८. गुरुकुल नवप्रभात आश्रम ओड़िशा में २८-२९ दिसम्बर-२०१२ को भव्य समारोह के साथ **अखिल भारतीय विद्वत्-सम्मेलन** आयोजन किया गया। इसमें भारत के विभिन्न प्रान्तों से संस्कृत-विद्वान् पधारे थे। नवप्रभात आश्रम के ब्रह्मचारियों ने सस्वर सामवेद गान किया। स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी महाराज (उत्तराञ्चल) ने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। स्वागत भाषण गुरुकुल नवप्रभात आश्रम के प्रधानाचार्य बृहस्पति जी ने रखा। **'सामाजिकोत्थाने गुरुकुलशिक्षापद्धतेः अवदानम्''**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

इस विषय में प्रोफेसर सोमदेव जी शतांशु गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, डॉ. यशपाल तोमर, प्राचार्य किसान महाविद्यालय मढ़ि (मेरठ), डॉ. अजय आर्य केन्द्रीय विद्यालय धमतरी (छ.ग.), आचार्य विश्वामित्र भारद्वाज, स्वामी सुरेश्वरानन्द जी महाराज, पं गोपबन्धु पुरोहित, पं. आदित्य प्रसाद पुरोहित, आचार्य विद्यासागर (कालाहाण्डी), पं. गांधी प्रधान, पं. सन्तोष शास्त्री (वलांगीर), पं. नरेन्द्र जी (नालको), पं. नरेन्द्र शास्त्री (विलासपुर), पं. भारतीनन्दन बन्धु, पं. पुरन्दर जी शास्त्री, हिमांशु शास्त्री, आचार्य धनञ्जय जी, पं. कौस्तुमजी, आचार्य सत्यकेतु, पं. भरतकुमार महर्षि दयानन्द महाविद्यालय (सुन्दरगढ़), अशोक मेहरे-कर्पपालि महाविद्यालय (बरगढ़) सभी ने संस्कृत, हिन्दी और ओड़िया भाषा में अपने विचार व्यक्त किये। इस अवसर पर ओड़िशा और छत्तीसगढ़ प्रान्त के तीन सौ से ज्यादा संस्कृत अध्यापक उपस्थित थे।

वर्ष २०१२ के लिये प्रह्लाद प्रधान स्मृति के अध्यक्ष, वरिष्ठ पत्रकार शान्तनु विश्वास जी ने पं. परीक्षित दाश जी को सम्मान से सम्मानित किया गया। यह अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन आयोजन गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ (उत्तरप्रदेश) ओड़िशा प्रान्त के सभी स्नातकों द्वारा आयोजित किया गया था।

१९. आर्यसमाज मन्दिर का शिलान्यास-गंगापुर सिटी के बंदरिया बालाजी के पास भगवती नगर में दिनांक २८ दिसम्बर २०१२ शुक्रवार को आर्ष कन्या गुरुकुल विद्यापीठ, नजीबाबाद बिजनौर की आचार्या प्रियम्वदा वेद भारती के द्वारा नवीन आर्यसमाज मन्दिर भगवती नगर का यज्ञ करने के बाद भूमि पूजन कर पंचशिला रखकर शिलान्यास किया गया। इस भूखण्ड को रमेशचन्द किशोरपुर वालों ने अपने पूज्य पिताजी स्व. श्री बाबूलाल जी की स्मृति में माताजी श्रीमती भगवती देवी की प्रेरणा से आर्यसमाज मन्दिर हेतु दान में दिया था। इस अवसर पर रमेशचन्द एवं उनके सभी भाइयों व परिवार के सदस्यों ने यजमान बनकर यज्ञ में भाग लिया।

२०. आर्यसमाज चेन्नई का **वार्षिकोत्सव** एवं **गायत्री महायज्ञ** ३० दिसम्बर से ६ जनवरी तक था। इस कार्यक्रम में कुमायूं विश्वविद्यालय पोस्ट ग्रेज्युएट विभाग से डॉ. विनय विद्यालंकार एवं दिल्ली से भजनोपदेशक पं. कंचन कुमार जी तथा तबला वादक मनोज कुमार जी थे। दोनों का अच्छा प्रभाव पड़ा। आचार्य जी ने प्रश्नोत्तर के माध्यम से अच्छा प्रभाव डाला। आचार्य जी ने ब्रह्मा के रूप में आसन ग्रहण किया। आर्यसमाज के प्रति समर्पित मान्य बाबू श्री जयदेव जी आर्य के साथ ही मान्य सुधीर जी एवं पुरोहित डॉ. दुलालचन्द शास्त्री ने मन्त्रों का पाठ किया। पूर्णाहुति के दिन लगभग डेढ़ हजार लोगों ने यज्ञ में आहुति डाली। डी.ए.वी. विद्यालय समूह के बच्चों ने बहुत ही सुन्दर कार्यक्रम प्रस्तुत किया। इस उपलक्ष्य में आर्यसमाज के प्रतिष्ठित सदस्य स्मृतिशेष श्री वी.एन.बजाज की धर्मपत्नी श्रीमती करमावाली बजाज को उनके आजीवन प्रतिवर्ष लंगर का सारा खर्चा देने के कारण मान्य डॉ. विनय विद्यालंकार एवं मान्य श्री जयदेव जी के कर कमलों से आर्य दानवीर रत्न से सम्मानित किया गया।

२१. महर्षि भारद्वाज आश्रम जूबा पाटनागढ़ बलांगीर उड़िसा का द्वितीय **वार्षिकोत्सव** १६-१७ फरवरी २०१३ को आयोजित किया जा रहा है। प्रथम नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन होगा, फिर उसमें **यजुर्वेद पारायण यज्ञ** होगा। इसमें आसपास के साधु-संन्यासी भी आयेंगे। आश्रम के कुलाधिपति सामदेव जी महाराज के द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में यज्ञ, प्रवचन व योगशिविर के साथ बच्चों की क्रीड़ा प्रतियोगिता भी होगी। इस आश्रम में योग एवं आयुर्वेद के द्वारा चिकित्सा भी की जाती है। यहां प्रतिदिन यज्ञ होता है व आसन-प्राणायाम भी सिखाये जाते हैं। उड़ीसा के निर्धन प्रदेश में साधनों के अभाव में यह प्रयास चल रहा है।

चुनाव-समाचार

२२. आर्यसमाज रेलवे कॉलोनी, कोटा-दिनांक २३.१२.२०१२ को हुए चुनाव में सर्वसम्मति से निम्नानुसार कार्यकारिणी का निर्वाचन हुआ। **अध्यक्ष**-हरिदत्त शर्मा, **वरि. उपाध्यक्ष**-रामकृष्ण बलदुआ, **उपाध्यक्ष**-रामजी लाल शर्मा, **मंत्री**-करणसिंह आर्य, **उपमंत्री**-वी.पी. गुप्ता, **कोषाध्यक्ष**-राधेश्याम शर्मा, **पुस्तकाध्यक्ष/ऑडीटर**-लाल जी मौर्य।

२३. आर्यसमाज वैशाली नगर, जयपुर में ०६.०१.२०१३ रविवार को साधारण सभा की बैठक में सर्व सम्मति से चुनाव कराए गए। जिसमें निम्न पदाधिकारियों का चयन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. मोतीलाल शर्मा ने की। **संरक्षक**-इंजी. कृष्णलाल नारंग, **प्रधान**-डॉ. मोतीलाल शर्मा, **उप-प्रधान**-श्री आर.के. नारंग, श्री धर्मवीर गोम्बर, **मन्त्री**-श्री आशीष मिनोचा, **उपमन्त्री**-श्रीमती दीपिका छाबड़ा, **कोषाध्यक्ष**-श्री जे.एन.चोपड़ा।

शोक-समाचार

२४. प्रो. चन्द्रप्रकाश जी आर्य करनाल का प्रवास में आकस्मिक निधन हो गया है। आप हिन्दी व संस्कृत के विद्वान् थे। आपके लेख विभिन्न आर्य पत्रिकाओं में छपते रहते थे। वे राष्ट्रभाषा संघर्ष समिति के जिलाध्यक्ष थे। उनकी अंत्येष्टि १४ जनवरी को वैदिक रीति से करनाल में हुई ❋

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

आचार्या शीतल

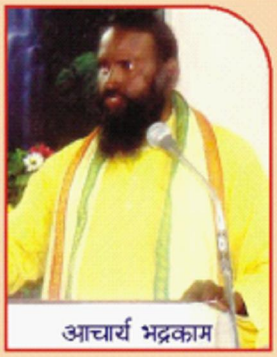
आचार्य भद्रकाम

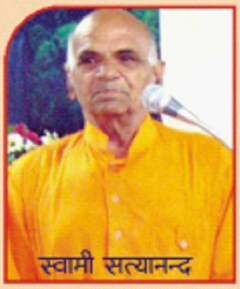
स्वामी सत्यानन्द

श्री मोहनचन्द

आचार्य आनन्द पुरुषार्थी

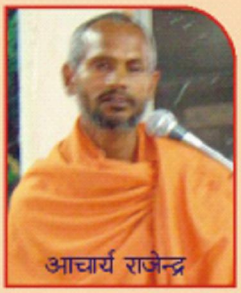
आचार्य राजेन्द्र

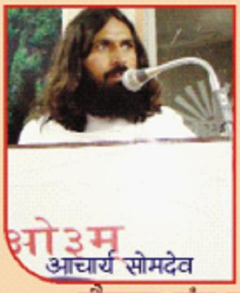
ओ३म्
आचार्य सोमदेव

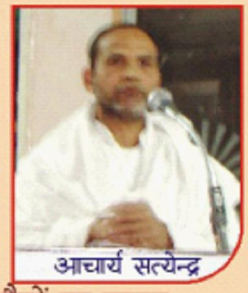
आचार्य सत्येन्द्र

गौशाला संघ द्वारा रेलयान में वध हेतु ले जाए जा रहे ६४ बैलों का बचाव
स्थान : ऋषि उद्यान, अजमेर

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.